भारत एवं राजस्थान सरकार द्वारा विज्ञापनों के लिए मान्यता प्राप्त

आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/ UD/ 29-150/ 2023-2025

शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जनसंवाद का पाक्षिक

वर्ष 9 | अंक 10 | उदयपुर शनिवार 01 जून 2024 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

देश के विभिन्न अंचलों में फैले लोकनृत्यों के अध्ययनोपरांत

लोकनृत्यों से हुआ शास्त्रीय नृत्यों का जन्म

-जगदीशचन्द्र माथुर -

जिन लोगों के सामाजिक विकास में सदियों का अंतर है उनके नृत्यों को देखने से लगता है, मानों अनेक युग सामने से गुजर रहे हों। इनमें विशाल जनसमूहों के युग-युग के जीवन और भावों की झाँकी मिलती है। इन रसमी या अनुष्ठानिक नृत्यों के शहरी दर्शक इस अभिप्राय को नहीं समझ पाते क्योंकि वे नृत्य के साथ होने वाले गीतों का अर्थ नहीं जानते। केरल के वैलक्कली नृत्य में कुरुक्षेत्र की लड़ाई का अभिनय किया जाता है। इसमें विजयी पाण्डवों के विशालकाय पुतले बनाये जाते हैं और पराजित कौरवों का अभिनय करने वाले ढाल-तलवार लेकर नाचते हैं। अब पुराना जातीय जीवन समाप्त हो रहा है। सामाजिक और धार्मिक कृत्य और संस्कार भी अपना प्रभाव और उद्देश्य खो बैठे हैं। मशीन युग की समस्त नीरसता मनुष्य की आमोदप्रियता, जवानी की उमंग और उसके हर्ष-विषाद से जन्म लेने वाले गीतों को नयापन दे रही है।

भारत दीर्घकाल से विभिन्न परम्पराओं का भंडार माना जाता है। लोकनृत्य भी इनमें से एक हैं। इतिहास की अनेक भली-बुरी स्थितियों का सामना करके भी वे आज जीवित हैं। शास्त्रीय नृत्यों का जन्म इन्हीं लोकनृत्यों से हुआ है।

लोकनृत्यों का लोकजीवन से गहन सम्बन्ध है और वही उनका प्रेरणा-स्रोत है। ग्राम जीवन का सच्चा चित्र उनमें देखने को मिलता है और उनसे गांव के आचार-विचारों का पता चलता है। उल्लास और स्वच्छंद अभिव्यक्ति लोकनृत्यों की विशेषता है। उनमें गूढ़ नियमों का बंधन नहीं। सीधा और व्यापक प्रभाव होने से लोकनृत्यों की वह विशेषता है, जो उन्हें विकसित शास्त्रीय कला से पृथक करती है।

लोकनृत्यों की बहार में कई सदियों के जन-जीवन की झांकी मिलती है। इनमें बनावट नहीं होती बल्कि वन्य-पुष्पों की ताजगी और सुन्दरता होती है। मंदिरों में और त्योहारों पर पुराने ढंग से नाचने का काम अब कुछ खास टोलियां करती हैं। मेले-तमाशे और हाट-बाजारों में नाच करने वाली टोलियां पेशेवर नहीं, खास मौकों पर पैसा लेकर नाचती हैं। जिन लोगों के सामाजिक विकास में सदियों का अंतर है उनके नृत्यों को देखने से लगता है, मानों अनेक युग सामने से गुजर रहे हों। इनमें विशाल जनसमूहों के युग-युग के जीवन और भावों की झाँकी मिलती है।

भारत में संस्कृति की धाराओं का ऐसा मिश्रण हुआ है कि अनेक नृत्यों को किसी एक श्रेणी में रखना कठिन है। हमारे देश में सबसे अधिक नृत्य काम-धन्धों से संबंधित हैं। ये सबसे सरल भी होते हैं जैसे बंगाल और बिहार के संथालों के नाच में, जिनमें प्रतीकों का अधिक सहारा लिये बिना फसल की बुवाई और कटाई को दर्शाया जाता है। कुछ नृत्यों का सौराष्ट्र के तिप्पनी नाच के समान, किसी एक धंधे से सम्बन्ध है। तिप्पनी नाच में औरतें मुंगरियों से फर्श कूटने का अभिनय करती हैं और हल्की मुंगरियां लेकर नाचती हैं। आसाम की बोडो-कछारी जाति का नाच कैजामा-पनई है। जंगल में पेड़ काटने या पेड़ के नीचे से लाल चींटियों को हटाने का अभिनय किया जाता है। शिकार मनुष्य जाति का सबसे पुराना धंधा है और इस पर अनेकों नृत्य हैं, जिनमें से अधिकांश बड़े जोरदार और मरदाने होते हैं ।

फसल की पहली कटाई को एक अनुष्ठान या रस्म का रूप दिया जाता है। शिकार उदर-पालन का एक साधन होने पर भी, युद्ध के भाव से गहरा सम्बन्ध रखता है। एक लोकनृत्य पर दूसरे लोकनृत्यों की छाया पड़ जाती है या उनका मिश्रण हो जाता है। कोई काम संस्कार या रीति रसम का रूप धारण कर लेता है, तो उसके अधार पर बने नृत्य में भी विशेष अभिप्राय और शिल्प आ जाते हैं। इन रसमी या अनुष्ठानिक नृत्यों के शहरी दर्शक इस अभिप्राय को नहीं समझ पाते क्योंकि वे नृत्य के साथ होने वाले गीतों का अर्थ नहीं जानते।

जिन नृत्यों ने रीतिरस्म के स्तर से उठकर धार्मिक नृत्यों का रूप ले लिया है उन्हें एक सूत्र में बांधनेवाली दो प्रवृत्तियां हैं। असंख्य ग्रामीण जनता अब भी मंत्र-तंत्र और चमत्कार-चिकित्सा में विश्वास करती हैं। आसाम के देवधानी और राजस्थान के तेराताली नाच में इसी आवेश या देवता के आने का चित्रण होता है। इस नृत्य को प्राय: एक ही व्यक्ति करता है। शुरू में यह धीरे-धीरे अंग चलाता है और गुनगुनाता है। क्रमश: उसका स्वर ऊंचा होता जाता है और नृत्य की गति बहुत बढ़ जाती है और अन्त में वह एकदम शिथिल हो जाता है। कुछ नाच डरावने होते हैं और दर्शक सम्मोहित सा हो जाता है। मिथिला की स्त्रियां अकाल निवारण के लिए 'जट-जटनी' नृत्य करती हैं। आसाम में मच्छरों को भगाने के लिए 'महान' नाच किया जाता है।

मनुष्य ने प्रकृति को कोमल और भीषण अनेक रूपों में देखा। वह विश्वंभरा जगद्धात्री माता भी है और संहारिका चण्डिका भी। वह भक्ति और भय दोनों भाव उत्पन्न करती है और इन्हीं से तंत्र-मंत्र और उर्वरता के नृत्य निकले। गुजरात के गरबा नृत्य में बीच में जो मिट्टी का कलश दीपक के साथ रखा जाता है, वह भी मातृत्व का प्रतीक है।

नदी और समुद्र तट के निवासी प्रकृति को पहाड़ों और घाटियों के निवासियों से भिन्न रूप में देखते हैं। प्रकृति के शान्त और प्रचण्ड रूपों की प्रतिक्रिया भी भिन्न होती है। मणिपुर का लाइहरानोबा लोकनृत्य उर्वरता के उत्सव या अनुष्ठान से निकला। बाद में इसमें भगवान कृष्ण की लीला और शिव की कथा मिल गई। केरल के मोपला मुसलमानों के कल्कोली नाच के समय जो गीत गाये जाते हैं, उनमें हिन्दू देवताओं के भी नाम आ जाते हैं।

युद्ध-नृत्यों या मारू-नाचों को एक सूत्र में बांधनवाली कड़ी नहीं मिलती। कुछ जातियों में युद्ध-नृत्य होते ही नहीं। युद्ध-नृत्य के नाम से प्रचलित अनेक नाच युद्ध की प्रेरणा या उत्तेजना नहीं उत्पन्न करते बल्कि युद्ध-प्रवृत्ति को उदात्त रूप देते हैं। केरल के वैलक्कली नृत्य में कुरुक्षेत्र की लड़ाई का अभिनय किया जाता है। इसमें विजयी पाण्डवों के विशालकाय पुतले बनाये जाते हैं और पराजित कौरवों का अभिनय करने वाले ढाल-तलवार लेकर नाचते हैं।

साधारणत: समझा जाता है कि नागाओं के सबसे अच्छे नाच युद्धनृत्य होते हैं, पर ऐसा नहीं है। वास्तविक युद्ध-नृत्य तो आसाम की लुशाई पहाड़ियों की लेखर जाति का 'सवलकिया' नाच (युद्ध में आहत लोगों की आत्मा का नृत्य) है। बंगाल के रायबन्शी नर्तक

बारातों में बड़ी अच्छी कलाबाजी या पैंतरे दिखाते हैं। आसाम की धुलिया जाति में कलाबाजी और पैतरों का और भी ज्यादा प्रचलन है। नृत्यों को खेल समझने की प्रवृत्ति सबसे अधिक बस्तर (मध्यप्रदेश) के मुरिया जाति में है। इनके हुल्की, मन्द्री और करसना नाचों का सम्बन्ध धार्मिक कृत्यों से नहीं है और न इनका कोई अन्य गूढ़ अभिप्राय या अर्थ है।

सबसे आकर्षक तो नर्तकों के टोली बांधने का ढंग है, जो नाच में गतिमान होने पर और भी मनोहर लगता है। सबसे प्रचलित रचना मण्डल या गोल घेरा है। आसाम के बिहु नाच में यह घेरा सीमित रहता है और गुजरात के गरबा नाच में स्वच्छन्द। उड़ीसा के शबर लोग नाच में जो इकट्ठी पंक्ति बनाते हैं, उसमें जुलूस का आभास होता है। बहुत से नृत्यों में जो एक या दो पंक्तियां बनाई जाती हैं, उनमें बारात, शवयात्रा या देवता की रथयात्रा के अगवानी या रक्षकदल का आभास होता है।

नृत्यों में स्त्री-पुरुषों के जोड़ी बनाने या खड़े होने के इतने अधिक ढंग हैं कि उसमें एक ही शैली खोजना व्यर्थ होगा। पश्चिम के बालरूम नाच जैसे अलग-अलग जोड़े इन नृत्यों में नहीं होते। साधारणतया पुरुष और स्त्रियां अलग-अलग पंक्तियों में खड़े होते हैं या दो लड़कों के बीच में एक लड़की रहती है। साथियों के हाथ और कन्धे पकड़ने के तरीके भी अनन्त हैं। जैतिया पहाड़ी के नृत्य में टोली रचना और हाथ पकड़ने के ढंग जटिल हैं जबकि संथालों के बहुत सीधे पर चाहे ढंग जो भी हों, इसमें व्यक्तियों को नहीं, पूरी टोली को महत्त्व दिया जाता है।

बिहार के ओरांव लोगों के कदम नाचने में ऐसे पड़ते हैं कि जैसे कोई काँतर अपने सौ पैरों से सरकती हो। 'आओ' नागा पहले एक कदम दाहिने चलते हैं फिर एक कदम पीछे और फिर झटके से घुटना मोड़ कर दाहिने पांव को दो बार जमीन पर पटकते हैं। शीतप्रधान हिमाचल प्रदेश के नृत्यों में शुरू में बहुत छोटे-छोटे कदम रखे जाते हैं और बहुत धीरे-धीरे नाच की गति बढ़ती है। कुछ नृत्यों में तो नर्तक अपने पांव एक ही स्थान पर जमा कर रखते हैं और धड़ को ही वृत्ताकार घुमाते हैं।

अनेक लोकनृत्यों के साथ के गीतों में एक ही कड़ी बार-बार दोहराई जाती है, और कभी-कभी ये गीत एकरस जान पड़ते हैं। इन नाचों में विविधता, एक तो ढोल की मस्त थापों से आती है और दूसरे नर्तकों के रंगीन वस्त्राभूषण और श्रृंगार से। लोकनृत्यों के ढोल के भी अनेक रूप हाते हैं। आसाम की गारो जाति के लोगों का ढोल इतना बड़ा होता है कि एक आदमी उसे दोनों ओर से बजा नहीं सकता। मध्यप्रदेश के मुरियों का छोटा सा ढोल होता है जिसकी आवाज बड़ी तेज होती है। नर्तक टोलियों की बांसुरी, तारवाद्य और तुरही आदि देखने में बड़े अच्छे लगते हैं पर ढोल ही नर्तकों का आह्वान करता है, नृत्य की लय और गति का संचालन करता है और नृत्य में उल्लास उत्पन्न करता है।

जलवायु के अनुसार नर्तकों के वस्त्रों में भिन्नता होती है। हिमाचली और भोटिया नर्तक पूरे कपड़े पहनते हैं। जुआंग बहुत कम कपड़े पहनते हैं। मनकों की मालाओं और अन्य गहनों के कारण वे बहुत अच्छे लगते हैं। वनवासी नर्तक का शिरोधान उसके जंगल के साथियों-पशुपक्षियों का अनुकरण करता है पर बस्ती में रहने वाले नर्तक अपने हरेभरे खेतों की सुनहली फसलों जैसी रंगीली पगड़ियां बांधते हैं। नृत्य के समय ताली बजाने से, एक साथ पाँव रखने में ही मदद नहीं मिलती, बल्कि इसमें हाथों का सुन्दर उपयोग भी है, जैसे गुजरात के गरबा नृत्य में। लोकनर्तक नृत्यों में हाथों का क्या उपयोग करते हैं यह एक अत्यंत रोचक विषय है। कश्मीर और उत्तरप्रदेश के पर्वती नर्तकों के हाथ नाचते समय उनके रूमालों और शालों से खेलते रहते हैं। छड़ी भी यही काम देती है। महाराष्ट्र और गुजरात के 'गोफ' नृत्य में नर्तक एक खम्भे में बड़ी कुशलता से रंगबिरंगी डोरियां लपेटते और खोलते हैं। महाराष्ट्र की लेजिम से बहुत अच्छी ध्वनि भी निकलती है और लय द्वारा अंगचालन में भी सहायता मिलती है।

लकड़ी के घोड़ों का नाच राजस्थान (कच्छीघोड़ी) और तंजोर में होता है। गोंड लोग लकड़ी पर चढ़कर ऐसी फुर्ती में नाचते हैं जैसे वह लकड़ी नहीं शरीर का एक अंग ही हो। जैसे लोकजीवन के और काम मिलकर किये जाते हैं, वैसे लोकनृत्य भी। कोई सूत्रधार या संगीत निर्देशक नहीं होता। प्राय: एक अगुवा होता है। 'अखाड़ा' या गांव के मैदान में नाचते-नाचते, नर्तक अनायास ही लय सीख लेते हैं।

अब पुराना जातीय जीवन समाप्त हो रहा है। सामाजिक और धार्मिक कृत्य और संस्कार भी अपना प्रभाव और उद्देश्य खो बैठे हैं। मशीन युग की समस्त नीरसता मनुष्य की आमोदप्रियता, जवानी की उमंग और उसके हर्ष-विषाद से जन्म लेने वाले गीतों को नयापन दे रही है।

ARCHI
PEARL PARADISE
3 & 4 BHK Luxury Apartment

ARCHI
Group of Builders

@ MEERA NAGAR, SOBHAGPURA, UDAIPUR

CHANGING THE SKYLINE OF UDAIPUR.

@ DPS ROAD, SHOBHAGPURA, UDAIPUR

ARCHI
THE ADDRESS

4 & 5 BHK
Luxury Apartment

CORPORATE ADDRESS
Ground Floor, Archi Arihant Building, 100 ft. Road
Shobhagpura, Udaipur, Rajasthan - 313001.

www.archigroup.in
info@archigroup.in
archigroup_udaipur

7733-883-883

स्मृतियों के शिखर (185) : डॉ. महेन्द्र भानावत

गोकुलचंदजी पीतलिया : चार-चार आचार्यों का सान्निध्य लिए महाव्रती ही बने रहे

तेरापंथ सम्प्रदाय के सुश्रावक गोकुलचन्दजी पीतलिया का जन्म संवत् 1968 की पौषवदी अष्टमी को देवगढ़ के लसाणी गांव में हुआ। साधारण स्थिति के परिवार में रहते धर्मध्यान में पूरी आस्था रखना, साधु-संतों की निष्ठापूर्वक सेवा करना, प्रतिदिन सामायिक करना जैसे कार्यों में अग्रणी रहने के कारण समाज में उनकी अच्छी पूछ और पहचान बनी।

गोकुलचन्दजी का यह सौभाग्य रहा कि उन्हें अपने जीवनकाल में तेरापंथ धर्मसंघ के चार-चार आचार्यों का सान्निध्य, सामीप्य एवं शुभ आशिष प्राप्त हुआ। आचार्य कालूगणी, आचार्य तुलसीगणी और आचार्य महाप्रज्ञ के जब पहलीबार दर्शन किये तो मन में कोई-न-कोई संकल्प अवश्य रखा और उसका पूर्ण निर्वाह किया।

आचार्य तुलसीगणी से ब्याज दी हुई रकम पर एक रूपया सैंकड़ा से अधिक ब्याज नहीं लेने का संकल्प लिया जिसका निर्वाह अंत तक किया। लहसुन, प्याज नहीं खाने पर तो सभी नियंत्रण रखते हैं पर ब्याज पर नियंत्रण रखना तथा उस मुनाफे में से आधा आना बहिन-बेटियों तथा आधा आना जरूरतमंदों पर खर्च करने का संकल्प रखने वाले कितने लोग मिलेंगे।

इन सबसे पीतलियाजी ने उस कहावत को अक्षरशः अपने ऊपर चरितार्थ किये रखी जिसके लिए कहा जाता है कि धर्म की जड़ें ठेठ पाताल में गहरी समाई रहती हैं। ये जड़ें सदैव हरी रहकर फूलती फलीभूत होती रहती हैं। इन आचार्यों के साथ युवाचार्य महाश्रमण एवं साध्वीप्रमुखा कनकप्रभाजी का आशिष पाकर भी पीतलियाजी बड़े धनभागी-बड़भागी बने रहे। अपने जीवन में अनेक व्रतों को साधने वाले गोकुलचन्दजी अन्त तक महाव्रती ही बने रहे।

पीतलियाजी ने तेरापंथ धर्मसंघ का 'संयम खलु जीवनम्' आदर्श मोनो आत्मस्थ किया। इसमें भगवान महावीर के सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य और अचौर्य ; इन पांच सिद्धान्तों को पांचों इन्द्रियों की तरह प्रमुखता से वरण करते हुए जीवन-शुद्धि बनाये रखी। गुरुदेव तुलसी के जीवन-मंत्र को पूर्ण मनोयोग से स्वीकार कर अपने को महिमावान बनाये रखा। वे कोई साधु या सन्त नहीं थे किन्तु धर्मसंघ का आसरा पाकर गृहस्थ के सुधर्म के सुमार्ग पर चलकर अपना जीवन सार्थक करते गृहस्थ-सन्त ही बने रहे।

गोकुलचन्दजी का यह स्वभाव ही बन गया कि भोजन की थाली आते ही सबसे पहले आधी रोटी कुत्ते के लिए निकालते। इस बीच और कोई भीख मांगने वाला आया तो सबसे पहले उसे एक मुट्ठी आटा या पैसा देते, उसके बाद ही भोजन करते। पहले किसी को देने और फिर भोजन ग्रहण करने से उनको बड़ी आत्मिक शान्ति मिलती। कोई चंदे के लिये आता तो उसे कभी ना कहकर निराश नहीं किया। घरवालों को कहते कि इनका आना शकुनी हुआ। कुछ देकर जितना लावा लेना हो ले लो। चूको मत। यह जीवन ऐसे ही चला जायेगा।

धर्मार्थ कार्य के लिए अथवा समाजहित के कार्य के लिए कहीं जाते तो पहले से घर में राय मशविरा कर लेते कि यदि मौका हुआ तो कुछ देने में हिचकिचाना नहीं। अपनी भावना के अनुसार दी जाने वाली रकम अपने साथ ले जाते और रोकड़ दे आते।

कहते कि धर्मार्थ दी जाने वाली राशि कल पर नहीं छोडना चाहिये। ऐसे कई अवसर आए जब धर्मार्थ कोई राशि बोलकर निश्चित तिथि पर देने को कहा और किसी कारणवश नहीं दी जा सकी या कोई लेने नहीं आ सका तो उस तिथि के बाद जितने दिन निकले उस राशि को उतने दिन के ब्याज सहित दी। उनका कहना था कि दान की बोली वाहवाही लूटने, प्रशंसा पाने, प्रतिष्ठा अर्जित करने के लिए नहीं होती। उसका सम्बन्ध भावना से है सो तत्काल देने में ही भला है, अन्यथा यह भी एक कर्जा है।

पीतलियाजी ने जरूरतमंदों को उधार राशि देने में कभी हिचक नहीं दिखाई। ब्याज पर रकम देना उनका कभी व्यवसाय नहीं रहा। महीने-महीने ब्याज लेना या बट्टा काटकर राशि देने का कार्य उन्होंने कभी नहीं किया। ब्याज के लिए तो ठीक, मूल राशि के लिए भी उन्होंने कभी उगाई नहीं की। कई लोग ब्याज खा गये। मूल रकम खा गये तब भी उन्होंने किसी को परेशानी में नहीं डाला।

गोकुलचन्दजी स्वभाव से बड़े शान्तिप्रिय रहे। कभी कोई आपदा मोल नहीं ली और न व्यर्थ के झगड़े टंटों में ही सम्मिलित हुए। उनका यह सोच रहा कि दो भांडे (बर्तन) जहां भी होते हैं, आपस में टकराये बिना नहीं रहते। फिर मनुष्य का तो कहना ही क्या! संयुक्त परिवार में ज्यादा सम्भलकर रहना पड़ता है। जब स्वयं की ही पारिवारिक समस्या हो और संयुक्त रहने के लिये मजबूर होना पड़ता हो तब वहां बहुत सारी चीजों से मुंह फेरना पड़ता है। देखी-अनदेखी करनी पड़ती है। समझौता बनाये रखते सौहार्दजीवी जीवन जीना पड़ता है। 'कम खाओ गम खाओ' बड़ेरे कहते आये हैं। उनकी सीख पर चलते रहने से आदमी कई परेशानियों से मुक्त हो जाता है।

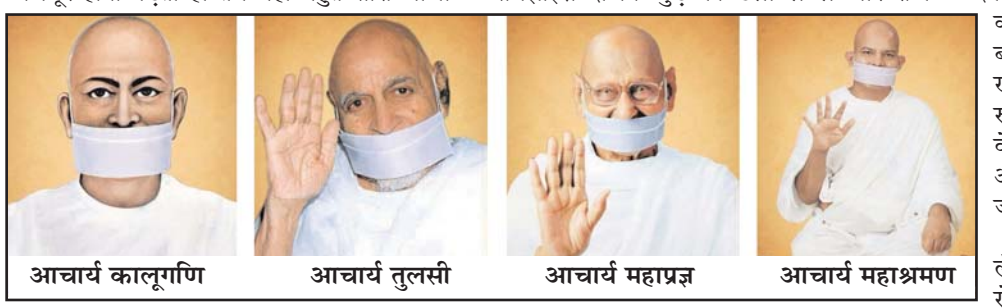

आचार्य कालूगणि | आचार्य तुलसी | आचार्य महाप्रज्ञ | आचार्य महाश्रमण

मोटी लड़ाई तो अर्थ केन्द्रित होती है। महावीर वाला अपरिग्रह सिद्धान्त शाश्वत है। परिग्रह से पचासों अनर्थ होते देखे गये हैं। मन में यदि यह बिठालें कि जो समर्थवान नहीं होते, घोर गरीबी में होते हैं, वे भी अपना जीवन जीते हैं। फिर हम तो उनसे अधिक अच्छे हैं, यह सोच लें तो कभी भी मन में दुराभाव नहीं आयेगा।

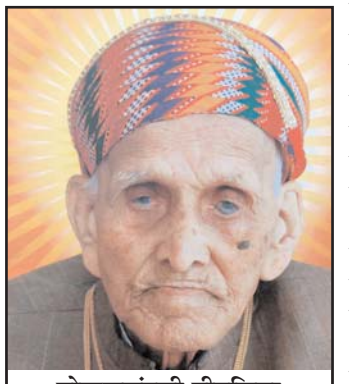

गोकुलचंदजी पीतलिया

पत्नी के निधन होने के कारण गोकुलचन्दजी ने तब पिता के साथ-साथ माता की भूमिका का निर्वाह भी अपनी संतान के पालन-पोषण के लिये किया। फिर भी माता तो माता होती है। उस जैसी ममता और वात्सल्य भाव कोई नारी ही दे सकती है सो बहिन बादामबाई को अपने काकाजी मोड़ीरामजी और काकीजी संतोषबाई के संरक्षण और सान्निध्य में रहना पड़ा।

एकबार बादामबाई के हाथों मटकी फूट गई। इससे बड़ा बवंडर मचा। बच्चे तो आपस में झगड़ते ही रहे पर बड़ों को भी बड़ी अथल-पुथल हुई। अन्त में गोकुलचन्दजी को इसका पता चला तो वे चुपचाप कुम्हार के वहां जाकर मटकी खरीद लाये और काकाजी को लाकर दी। बोले- ''मटकी किसी ने फोड़ी हो, बच्चे ही तो हैं फिर बड़ों के हाथों फूट जाती तो किसी कान कोई बात नहीं उठती।

मटकी पुरानी होने पर भी टूट-भाग हो सकती है और टूट-भाग नहीं हो तब भी तो मटकी बदली जाती है। यदि यह मेरे हाथों से फूट जाती तो कोई चूं तक नहीं बोलता। बच्चों की तुलना में मटकी का क्या माजना। झगड़ा बढ़ाओ तो पहाड़ बन जाय और शान्त करना चाहो तो किसी को हवा तक न लगे।''

विक्रमी संवत् 1970 में गोकुलचन्दजी लसाणी छोड़ उदयपुर आ गये। यहां हाथीपोल में इण्डिया मशीनरी एण्ड ट्रेक्टर कम्पनी नाम से दुकान प्रारम्भ की। फिर भूपालपुरा मेनरोड़ पर रोड़ दो मंजिला बंगला खरीदा जिसका 'गोकुल भवन' नाम रखा। बहूरानी कमलाकुमारी ने बताया कि बा साहब ने उनके साथ सदा ही बहू से अधिक बेटी का बर्ताव किया। विवाह के बाद ही उन्होंने यह भलावण दे दी थी कि इस घर में कोई औरत नहीं है।

तुम ही इस घर की स्वामिनी हो अत: हमारी देखभाल करने के साथ-साथ स्वयं की देखभाल, घर की पूरी जिम्मेदारी तुम्हारी रहेगी। स्वयं के खाने-पीने का पूरा ध्यान रखना। कोई महिला होती तो तुम्हारा ध्यान रखती। खाने के समय तुम्हारी मनुहार कर अपने साथ खिलाती-पिलाती।

एकबार हरी काचरी की सब्जी बनाई। प्रारम्भ में सभी कचरियां चख ली थीं पर अंत में सब्जी कम पड़ेगी, यह सोच दो काचरियां और लीं। वे भी पहले वाली काचरियों जैसी ही थीं सो उन्हें चखने की आवश्यकता नहीं समझी।

बासा ने सदैव की तरह भोजन कर लिया। केवल नींबू मांगा। यही सब्जी पुत्र मदन को रखी। पहले कौर में ही उन्हें सब्जी कड़वी लगी तो धर्मपत्नी कमला पर गुस्से हुए और थाली फैंक दी। बोले- ऐसी कड़वी सब्जी बासा को परोस दी। उन्होंने कैसे भोजन किया होगा। तुम्हें इतना भी ध्यान नहीं रहता। चखचखाकर सब्जी बनाती तो यह समस्या पैदा नहीं होती।

पास वाले कमरे में बासा आराम कर रहे थे। दौड़े-दौड़े आये और मदनजी को चुप किया तथा समझाइश दी कि गुड़ की डली ले ले और रोटी खाले। गलती किससे नहीं होती। जानबूझकर कोई कड़वी सब्जी नहीं बनाता। भाणे में जैसा जो आया उसे शान्तभाव से खा लेना चाहिये। अन्नदेवी का अपमान नहीं करना चाहिये। बहू घर की शान होती है। उसकी शान रखना तुम्हारे हाथ में है। तब से लेकर मदनजी क्या अन्य किसी सदस्य ने भोजन को लेकर चूं तक नहीं किया।

पीतलियाजी के 95 वर्ष पूर्ण होने पर मेरे सम्पादन में उनके पुत्र मदनजी ने अभिनन्दन ग्रंथ तैयार करवाया जो 'गोकुल गौरव' नाम से फरवरी 2006 में प्रकाशित हुआ। उदयपुर में नाइयों की तलाई स्थित तेरापंथ भवन में पांच सिंघाड़े से जुड़ी 22 सतियों के गरिमामय सान्निध्य में इसका लोकार्पण किया गया। साध्वी चांदकंवरजी द्वारा मंगलपाठ से प्रारम्भ हुए समारोह में साध्वी संघमित्राजी का उद्बोधन प्रत्येक श्रावक के लिए प्रेरक रहा। लोकार्पण अवसर पर मंचासीन डॉ. बसन्तीलाल बम्ब तथा सवाईलाल पोखरना प्रमुख अतिथि थे। इस मौके पर अनेक समाजों ने बासा का भावभीना अभिनन्दन किया।

अपने सन्देश में ग्रन्थ हेतु आचार्य महाप्रज्ञजी ने लिखा, ''गोकुलचन्दजी आस्थाशील और सेवाभावी श्रावक हैं। अपने जीवनकाल में उन्हें अनेक आचार्यों के दर्शन और सेवा का अवसर मिला। उन्होंने संयमित और सदाचार का जीवन जीया।''

युवाचार्य महाश्रमणजी ने लिखा, ''उन्होंने धर्मसंघ के आचार्यों की सेवा का अवसर प्राप्त किया। वे लौकिक सेवा में भी अपना योगदान देते रहे।''

साध्वीप्रमुखा कनकप्रभाजी ने लिखा, ''पीतलियाजी को तेरापंथ की आचार्य परम्परा में चार पीढियों के साक्षात्कार करने का सौभाग्य उपलब्ध हुआ। बचपन से ही उनका जीवन गुरुदर्शन और उपासना के अवसर मिलने के कारण त्याग, वैराग्य और नैतिक मूल्यों से प्रभावित रहा।''

श्री गोकुलचन्दजी अपने धर्मसंघ 'तेरापंथ' के प्रति अटूट आस्थावान, निष्ठावान एवं मौन सेवाभावी सुश्रावक बने रहे लेकिन अन्य धर्मसंघों के प्रति भी उनके मन में उतना ही आदर और विनय भाव था। यही कारण है कि सभी धर्मसंघों के साधु-साध्वियों के दर्शनार्थ जाते और उन्हें अपने घर को पावन करने की विनती करते।

बासा ने कभी ऐसा काम नहीं किया जिसके लिए उन्हें कोर्ट-कचहरी की शरण लेनी पड़ी हो। यद्यपि उनके जीवन में ऐसी घटनाएं घटीं जिनके कारण अदालत की शरण लेना लाजमी था पर तब भी उन्होंने बड़ा धैर्य रखा और संतोषी बने रहे। एकबार उन्होंने उदयपुर में एक प्लॉट खरीदा। उसकी रजिस्ट्री भी हो गई किन्तु जिसका प्लॉट था उसने धन के लोभ में आकर अधिक राशि लेकर किसी अन्य को प्लॉट बेच दिया। यह राशि कोई छोटी-मोटी नहीं थी। घरवाले तो जानते ही थे पर अन्यों को इसकी भनक तक नहीं पडने दी।

ऐसा ही एकबार एक व्यक्ति दुकान से भारी रकम का सामान ले गया। वह परिचित था पर पैसा देने में आनाकानी करता रहा और अन्त में हाथ खड़े कर दिये। इसी प्रकार एक अन्य व्यक्ति दुकान से 45 हजार रूपये का सामान खरीद कर ले गया। बड़ी मुश्किल से उसने सात हजार रूपये लाकर दिये तो बासा ने भी भारी पेटा रखा। बासा कहते रहे कि दुनिया में कई तरह के लोग हैं। पिछले भव का इनका कर्ज रह गया होगा सो इस जन्म में भुगतान हो गया। अब मैं कर्ज मुक्त हो गया हूं। मुझे बड़ा आत्म-संतोष मिला है।

एक ओर पीतलियाजी ने जरूरतमंदों को पैसा देकर ब्याज प्राप्त किया वहीं दूसरी ओर लसाणी का अपना पैतृक मकान बेच उस रकम की ब्याज की राशि प्रतिमाह जरूरतमंदों के लिए खर्च की। यह मकान 60 हजार में बेचा गया। रूपया सैंकड़ा के हिसाब से प्रतिमाह 260 रूपया वे लसाणी में अपने भाई को भेजते रहे जो अभावग्रस्त बूढ़ी महिलाओं तथा अन्य जरूरतमंदों को दिये जाते रहे।

पीतलियाजी प्रतिदिन कुल सात ही द्रव्य लेते। बाकी सबके आगार ले रखे थे। इनमें रोटी, सब्जी, दूध और एक फल प्रतिदिन लेते। वे पानी भी पाका पीते। पाका पानी राख मिला, चूना मिला या गर्म किया होता जो सभी के लिए सुस्वास्थ्यदायक है। दिन अस्त होने के बाद कुछ नहीं खाते-पीते। सुबह सूर्योदय के बाद ही कुछ लेते।

लसाणी के रहने वाले पीतलियाजी जब किराणा की दुकान करते थे तब अपने व्यापार-जीवन में भी बड़े सात्विक और ठोस ईमानदार रहे। उन्होंने छह प्रतिशत से अधिक नफा नहीं कमाया। मुनाफे में एक रुपये पर एक आना अलग निकालकर आधा आना कुलदेवी तथा आधा आना धर्मादा में खर्च किया। प्रतिदिन पांच से दस सामायिक करने वाले पीतलियाजी पैदल ही भ्रमण करते। इनके छोटे भाई मोडजी पर भी इनका बड़ा प्रभाव पड़ा। बासा सामायिक भी खड़े रहकर करते।

बासा गोकुलचन्दजी अपने पूरे जीवनकाल में धर्मश्रेष्ठ ही बने रहे। वे जब-जब भी कुछ अ-ठीक पाते, वैद्य पं. गौरीशंकरजी श्रोत्रिय को बुलाते। वैद्यराज मदनमोहन मालवीय आयुर्वेद कॉलेज के प्रोफेसर थे। उनके प्रति बासा की पूरी आस्था थी। मदनजी ने बताया कि बासा आयुर्वेद का ही इलाज लेते थे। वैद्यजी से उनका सम्बन्ध इतना आत्मीय हो गया कि वे भी उनके पारिवारिक सदस्य ही बने रहे। एकदिन बासा की तबीयत कुछ ज्यादा ही गड़बड़ा गई तब वैद्यराजजी को फोन किया गया। फोन पर जानकारी मिलने पर उन्होंने तुरन्त आने को कहा। दस मिनट बाद फिर वैद्यराजजी को फोन किया तो वे बोले-'मैं अब नहीं आरहा हूँ, तैयारी करो।'

इस बीच पत्नी कमलाजी पास ही के धर्मस्थल मोहन ज्ञान मंदिर गई और वहां विराजित सतियांजी श्री तारामतीजी को बुला लाई। महारासा ने बासा की स्थिति ठीक पाकर कहा कि इन्हें आहार के सौगन करादूं। कमलाजी ने कहा कि चारों आहारों यानी संथारे का पछखाण करादें। महारासा पशोपेश में पड़ गये। कमलाजी ने स्थिति भांपते कहा कि महारासा आप तो संथारा पछकादें। यदि बासा स्वस्थ हो गये तो मैं संथारा करलूंगी पर आपकी बात नहीं जाने दूंगी। बासा से पूछा तो उन्होंने भी हाथ जोड़ संथारा लेने की भावना व्यक्त की। इस पर महारासा ने संथारे के पछखाण करा दिये।

धीरे-धीरे बासा की स्वांस गति शिथिल हुई और देखते-देखते उन्होंने सबसे विदा ले ली। बमुश्किल घंटा भर उनका संथारा रहा। वैद्यराजजी को पता चला तो वे तुरंत पहुँचे और मदनजी को बताया कि बासा ने समग्ररूपेण अध्यात्म का जीवन जिया। वे बड़े सहृदय, दयालु, धर्मनिष्ठ तथा संतपुरुष थे।

मैंने जब-जब भी उनके दर्शन किये, मुझे वे एक अलौकिक शक्ति के रूप में ही मिले। दूसरी बार जब बासा का देखने आने का फोन मिला तब बासा के स्वरूप में एक दिव्य शक्ति ने मुझे यहां आने से रोक दिया और कहा, अब जाने से कोई लाभ नहीं है। यह संकेत पाकर ही मैंने जवाब दिया कि मैं नहीं आ रहा हूँ, तैयारी करो। उन्होंने 99 वर्ष की उम्र पाई। अंतिम समय तक भी वे पराश्रित नहीं रहे।

वह दिव्य आत्मा दरअसल वैक्रिय शरीर था। वैक्रिय शरीर की खासियत है कि वह छोटा-बड़ा, सूक्ष्म-स्थूल, एक-अनेक रूप धारण करने की सामर्थ्य लिए होता है। वह विविध क्रियाएं करने की सामर्थ्य रखता है। इस शरीरवालों में हाड़, मांस तथा रक्त नहीं होता और मरने के बाद कपूर की तरह उड़ जाता है।

शब्द रंजन

उदयपुर, शनिवार 01 जून 2024

सम्पादकीय

लीलगरी की कारीगरी का मुश्किल दौर

एकदिन भारतीय लोककला मण्डल संग्रहालय में एक ऐसा व्यक्ति आया जो पुरानी रंगाई छपाई की पोशाकें पहने आदमकद आदिवासी पात्रों को बड़ी बारीकी से निहार रहा था। जब वह अपने ढंग से पूरा संग्रहालय देख चुका तब मैंने उसे अपने कक्ष में बुलाकर उसकी जात-पांत पूछी तो पता लगा कि वह नाथद्वारा के पास शीशोदा नामक गांव में पिछली पांच पीढ़ियों से रह रहा है। उसका नाम अल्लानूर है और वह लीलगरी यानी कपड़ों की रंगाई-छपाई तथा बंधाई का काम करता है।

छपाई के अन्तर्गत मुख्य रूप से गूजर महिलाओं के घाघरों के लिए नानण्ये, कृषक महिलाओं के ओढ़ने के लिए छायल, पुरुषों के सिर पर बांधने के लिए तथा ब्राह्मण महिलाओं के पहनने के लिए अंगोछे, पोमचों में सधवाओं के लिए गुली के रंग तथा विधवाओं के लिए रेनसाई पोमचे छापने का काम करता है। बंधाई में लहरिया-दो रंगा-अंगूरी तथा मोती, तीन रंगा-बादामी, अंगूरी तथा कच्चा पीला, पंचरंगा-अंगूरी, मोती, कच्चा पीला, बादामी तथा कसकसी, बड़ी किनार वाले जापे पर ओढ़े जाने वाले पीलिये, पीले दाने तथा लाल होदवाली चूदड़ें, छोटी किनार वाले मोती कोर्‌ये, चौखुटी तथा चार दाणों के मिश्रण की एक दाली भरमा चूंदड़ें, मूंग्या रंगी सफेद व दूध्या होदवाली लाल पल्लों की दो तीन रंगी डबरी साड़ियां बांधने के काम में ये बड़े पारंगत हैं।

रंगाई में घाघरे, लूगड़े, फेंट्ये, कांचली, कुरते पागें तथा झगल्ये टोपी प्रमुख हैं। पागों में मोत्या, अंगूरी, शरबती, नाखूनी, लाल, पिस्ताई सुवापखी, अदरंग, केसरिया, जानुनिया आदि खूब चलते। ये पगड़ियां 20-20 वार की होतीं जिनके दोनों तरफ चिल्ले होते थे। पगड़ियों में छपाई का काम नहीं होता था।

अल्लानूर की इन बातों के उपरान्त जब मैंने उससे कहा कि नानणा बनाने की विधि के सम्बन्ध में थोड़ी जानकारी अपेक्षित है तो उसने बताना प्रारंभ किया - सर्वप्रथम रेजे को तालाब पर ले जाकर धोवने से धोया जाता है तदुपरान्त गीले रूप में ही उसे हरड़े में दाब कर सूखा दिया जाता है। हरड़े को पीसकर उसे पानी में गोल दी जाती है। सर्दी में, यह पानी थोड़ा गरम करके डाला जाता है।

यह रेजा एक थाला ही सूखाया जाता है। इससे ऊपरी भाग में गहरापन आ जाता है तथा नीचे हरड़े का फीकापन रह जाता है। फिर एक ढीबरे में घिसा हुआ गोंद रखकर पानी में पिसी हुई फिटकरी मिलाकर उससे रेजे को गहरे रंग पर छापा जाता है और छापकर सूखा दिया जाता है। सूखाने पर फिर उसे धो दिया जाता है फिर उसे एलीजर रंग में रंग दिया जाता है। इससे जहां फिटकरी के छापे होते हैं वह रंग बैठ जाता है फिर चिकनी मिट्टी में गोंद मिलाकर उसे बारीक कपड़े में छान लिया जाता है और तब पहले के लाल रंग पर सफेद पंखुड़ियों में मिट्टी गाल दी जाती है फिर रात्रि को जमीन में गड़ी नांद में चूने के पानी में लील मिलाकर रख देते है।

इससे रात में रंग पक जाता और चूना नीचे बैठ जाता। पानी में तेजी आ जाती तब प्रात: धीरे-धीरे नानणे के पड़ को खोलते हुए उसे माठ में चलाते और सूखा देते फिर उसे मसलते ताकि उसकी मिट्टी उतर जाती। तब चूना तथा गूंद मिलाते और नानणा छापते। लाल पर दूजी बूंटी छापते इससे होद आसमानी हो जाता और पांखुड़ियां सफेद बन जाती फिर धोकड़ी की कुट्टी कर कुंडे में उबालते। इससे उसमें से जाड़ा कस निकलता फिर उस कूंडे में दो तीन बार डुबो-डुबो कर सुखाया जाता तब पांखुड़ियां दाड़िम रंग की हो जाती फिर उसे सूखा देते और तब उसे फिटकड़ी में डालकर सूखाया जाता। इससे धोकड़ी का रंग पक्का पड़ जाता है।

यों सभी कपड़ों के बंधाई के अलग-अलग तरीके हैं मगर अब यह धंधा छूटा हुआ है। इस कार्य में अधिक मेहनत रहती है और उसका मेहनताना उतना प्राप्त नहीं होता। छापें बनाने का काम भकदरा जाति के लोग करते हैं जो चित्तौड़ में रहते हैं। उदयपुर में भी इनकी बस्ती है। अल्लानूर के पास विविध प्रकार की सौ के करीब छापें पड़ी हुई हैं। हमने इन छापों को संग्रहालय में रखने की मांग की तो बह बड़ा प्रसन्न हुआ और अबकी बार जब भी उसका उदयपुर आगमन हुआ, वह वे सब छापें लेकर आयेगा, यह विश्वास दिलाता हुआ उसने हमसे विदा ली। इन छापों का अध्ययन भी एक शोध का विषय है। बहुत सारी छापों से मेंहदी मांडनों तथा भूमि अलंकरणों की कला के तुलनात्मक अध्ययन में काफी सुविधा प्राप्त हो सकती है। कला-कारीगरी तथा जातीय ओढ़ना संस्कृति के अध्ययन में इनका विशेष महत्व है।

परिवार की लाड़ली

- माधव नागदा -

एक साथ तीन पीढ़ियां गांव के बस स्टेण्ड पर बस का इंतजार कर कही थीं। दादी, मां, पिता, बेटा और उसकी नई-नवेली बहू। बस स्टेण्ड हाइवे के किनारे था। हालांकि यातायात की कमी नहीं थी लेकिन लोकल बसों की कमी थी। फलस्वरूप लोगों को घंटों इंतजार करना पड़ता था।

समय गुजारने के लिये बेटे ने एक तरीका ढूंढ निकाला। वह आते-जाते ट्रकों के पीछे की लिखावटों को पढ़ने लगा। जरा जोर से ताकि सब सुन लें। कोई रोमांटिक सी बात होती तो बहू की ओर देख कर और जोर से बोलता। बहू घूंघट कुछ ऊपर उठाती, नीचे का ओंठ दांतों तले दबाती और सबकी नजरें बचाते हुए पति की ओर आंखें तरेरती। पति को पत्नी के चेहरे की यह लिखावट ट्रक की लिखावट से भी ज्यादा रोमांचित कर देती। उसे इंतजार में भी अनोखा आनंद आने लगा। अभी-अभी मार्बल से लदा एक ट्रक गुजरा था। ओवरलोड। धीमी रफ्तार। दर्द से कराहता हुआ सा। लिखा था, 'परिवार की लाडली'। बेटे ने कहा, वो देखो परिवार की लाडली जा रही है और बड़े लाड़ से पत्नी को निहारा। 'हुंह,इतना तो बोझा लाद रखा है और परिवार की लाड़ली!' पत्नी ने व्यंग्य किया।

सासूजी सुन रही थी। उन्होंने तिरछी निगाहों से अपने पति व सास की तरफ देखा, फिर बोली, 'इतना बोझा लाद रखा है तभी तो परिवार की लाड़ली है वरना.....। बहू ने महसूस किया कि सासूजी की आवाज घुट कर रह गई है।

चार दिन, चार जन, चार तीर्थ की गुजरात यात्रा (1)

-अर्थांक भानावत-

बोम्बे से नरसी मोनजी से बी. कॉम. आनर्स तथा नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ इवेंट मेनेजमेंट से पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा की परीक्षा देकर उदयपुर लौटा तो कुछ दिन बाहर भ्रमण करने की बन आई। फलस्वरूप पापा डॉ. तुक्तक, मम्मी रंजना, बड़े भैया शब्दांक और मैं चारों 23 अप्रैल की सुबह 5 बजे उठकर इस सफर की शुरुआत अपनी क्रेटा कार से की।

गाड़ी चलाने वाले मैं और मेरे पापा। उदयपुर की सुहावनी सुबह में सफर तय करते हुए हम स्फूर्ति से अहमदाबाद पहुंचे। गुजरात के इस भ्रमण में भारत की सभी संस्कृतियों का अनुभव करते हुए हमने दक्षिण भारतीय खाने का लुत्फ उठाया। फिर वहां से राजकोट होते हुए जूनागढ़ के रास्ते भर पवन ऊर्जा उद्यत करने वाली चक्कियां देखते एक घण्टे की दूरी पर देवभूमि द्वारका पहुंचे।

लगातार गाड़ी चलाते हमने साढ़े सात सौ किलोमीटर महज़ 12 घंटे में तय कर लिए। रास्ते में गुजरात के आधारभूत संचरण को देखकर हम आश्चर्यचकित हुए। सौ किलोमीटर से सीधे-सीधे राजमार्ग पर पवन चक्कियों, घर-घर सौर पैनलों, चिड़ियों के लिए पंखीघरों, बड़े-बड़े कारखानों तथा चिकित्सा से लेकर टेली-कम्युनिकेशन के कार्यालय आदि भी कम आकर्षक नहीं थे।

देवभूमि द्वारका में हम 'गुरुप्रेरणा बीकन' नामक होटल में रुके। वहां से हम द्वारकाधीशजी के मन्दिर के लिए रवाना हुए। इस छोटे से एक

किलोमीटर के रास्ते में हमने कृष्ण की इस पवित्र राजभूमि के कई पहलू देखे। वहां पहुंचकर मन्दिर के पुजारी की सलाह पर आरती का इंतजार करते हुए पहले 'सुदामा सेतु' देखा पर दुर्भाग्य से नवीनीकरण के कारण हम उसके ऊपर नहीं जा पाए। वहां से आगे बढ़ते हुए हमने गोमती नदी को अरब सागर में मिलते हुए देखा। इस मिलन के तट पर स्थापित है मीरांबाई का मन्दिर जिसे श्री संगमनारायणजी का मन्दिर भी कहा जाता है।

मीरांबाई के मन्दिर की एक खिड़की से सूर्यास्त देखते हम मंत्रमुग्ध हुए। एक-एक लहर को बस आता हुआ देख, उसके थोड़े समय बाद खोते हुए देख, उस पानी की शांति को देखते हुए भी उसके कहर को हमने महसूस किया। उस पानी की दूरियों में सूरज को एक लाल गोले की तरह समाता हुआ देख एक विशिष्ट अनुभूति महसूस की।

दिन का अंत करते हुए सामान्य से कम भीड़ में हम द्वारकाधीशजी के मन्दिर पहुंचे। मन्दिर में कृष्ण से लेकर बलराम और राधा के आठों रूपों के हमने दर्शन किए। ऐसी अनुभूति से साथ दिन समाप्त करते हुए हमें अगले दिन के अनुभवों का इंतजार था।

- क्रमशः

पिछले सात दशक का दोस्त नहीं रहा

सन् 1950 से 1952 तक जैन गुरुकुल छोटीसादड़ी में हाईस्कूल का सहपाठी रहा अमृत मुणोत गत दिनों चल बसा। वह मूलत: रतलाम का रहने वाला था पर गत कुछ वर्षों से इन्दौर रह रहा था। गुरुकुल में रतलाम के और भी छात्र थे।

अमृत उन सबमें 'जे साहब' के नाम से प्रिय था। वह गोल मटोल गोरी काया लिये था। उसकी हस्तलिपि भी वैसी ही गोलाई लिए घुमावदार थी। मैं उससे विपरीत वर्ण का था। हमारी दोस्ती इतनी घनिष्ट थी कि दोनों कक्षा में अगली बैंच पर बैठते थे।

दसवीं में हम दोनों आपस में बात कर रहे थे तो गणित के अध्यापक मोहनलालजी सोनी ने मुझे सबसे पीछे की सीट पर बैठने का आदेश दे दिया जहां से बोर्ड भी नहीं दिखता था। इस पर मैं भूख हड़ताल का कागज गेट पर लगाकर एक रात क्लासरूम में ही सो गया। अगले दिन प्रधानाध्यापक नेमिचन्दजी सुराणा ने हस्तक्षेप कर पुन: मेरी सीट दिलवा दी।

यह विडम्बना ही रही कि 1952 की हाईस्कूल परीक्षा में 20 में से 5 छात्र ही पास हुए- अमृत, मैं, नरेन्द्र भानावत, शान्ति और सुशील पोखरना। सप्लीमेंटरी से तीन कान्ति, सुरेन्द्र वया और विपिन जारोली। 1953 में मैंने अध्यापक की नौकरी से पहलीबार 50 रूपये प्राप्त किये तो पहली यात्रा रतलाम की मित्र अमृत से मिलने की की। बाई, पिताजी, भैयाजी, भाभीजी से परिचय हुआ। संयोग से फिर तो 1956 से 1960 तक मेरी रेल्वे की नौकरी रतलाम की हो गई जिससे निकटता बढ़ती गई। विमला के विवाह से शुरू होकर शान्ता, अमृत की और मेरी पारिवारिक आत्मीयता और घनिष्ट होती गई।

1990 में मुझे डायबिटीज हुई तो अमृत ने रतलाम बुलाकर कुछ व्यायाम ऐसे बताये जिससे एक वर्ष बाद ही मेरी दवाई बन्द हो गई। जीवन में कभी घट्टी पीसी तो भैयाजी नाथूलालजी के साथ। कभी लस्सी का कुल्ला किया तो अमृत की बारात के दौरान रेल में। किसी ने 'वेंड्यो' शब्द से सम्बोधित किया तो अमृत की मां ने। निर्मला भाभी विवाह करके रतलाम आई तो दो दिन तक मेरी पत्नी ने ही उन्हें कम्पनी दी। अभी 4-5 वर्ष पूर्व लायनेस कांफ्रेंस में पुणे आई तब से मेरी बहूरानी ऋतु से अत्यधिक स्नेह करने लगी है। हम जहां भी रहे, इन्दौर या रतलाम समय-समय पर फोन से जोक्स सुनाकर मैं अमृत को हंसा-हंसा कर लोटपोट कर दिया करता किन्तु जबसे बीपी बढ़ने, गिरने, हेमरेज होने और लकवे का थोड़ा असर होने पर अमृत का मनोबल कमजोर हो गया तो हमारी बातचीत पर भी उसका असर दिखने लगा।

दो दोस्तों की आपसी मैत्री तो होती है परन्तु उनकी पारिवारिक घनिष्टता का जुड़ाव बहुत कम देखने को मिलता है। अमृत ने अन्त तक यह मैत्री निभाई। इसे कैसे भुलाया जा सकता है। - बनवारीदत्त जोशी

प्रकाशित ग्रंथों पर सहयोग हेतु प्रविष्टियां आमंत्रित

उदयपुर (ह. सं.)। राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित ग्रंथों पर सहयोग योजना वर्ष 2024-25 हेतु राजस्थान निवासी लेखकों से हिंदी भाषा में रचित अथवा अनुदित ग्रंथ आमंत्रित हैं। इस योजना में लेखकों द्वारा रचित अथवा अनुदित तथा स्वयं के व्यय से प्रकाशित साहित्यिक व स्तरीय कृतियों के प्रथम संस्करण को ही सम्मिलित किया जाएगा। संकलनों, स्मारिकाओं तथा वार्षिकियों पर विचार नहीं होगा।

इस योजना में गत तीन वर्षों यानी 2021, 2022 और 2023 में प्रकाशित मुद्रित ग्रंथों पर ही विचार होगा। विचारार्थ प्रेष्य पुस्तक की दो प्रतियां, अपेक्षित प्रमाण-पत्र, व्यय के बिल व विवरण पत्र सहित अकादमी कार्यालय, उदयपुर में भिजवा सकते हैं। इस योजना में प्रविष्टि हेतु वे ही रचनाकार पात्र होंगे, जिनकी हिंदी भाषा में पांच से कम कृतियां प्रकाशित हैं। जिन लेखकों को इस योजना में दो बार सहयोग प्राप्त हो चुका है, वे भागीदारी नहीं कर सकेंगे।

बीकानेर की पाटा-संस्कृति

-डॉ. कविता मेहता-

राजस्थान की किसी अन्य स्थान से तुलना नहीं हो सकती जैसे भारत के सम भारत है। राजस्थान प्रान्त ही नहीं, यहां के शहर भी अपनी निज खासियत रखते हैं। उनमें बीकानेर जो भांति-भांति की मिठाइयों तथा नमकीनी स्वादों के लिए जाना जाता है वहां हर चौक-आंगन में रखे लकड़ी के बने विशाल पाटों के लिए भी पहचाननीय है।

चौक चौक घूमिये। हर चौक पाटे से सुशोभित है। इस पाटे पर चौपाल जमती है। त्यौहार-उत्सव रंगीन होते हैं। सगाई-सगपण मांगलिक बनते हैं। दुकड़ी से लेकर तिकड़ी, चौकड़ी, छकड़ी खेलने वाले ताश के पत्तों को परवान चढ़ाते हैं। शतरंज खेलने वाले शह मात देते प्यादे से लेकर ऊंट, घोड़े, हाथी की चहलकदमी से वजीर और राजा की हलचल बढ़ती जाती है। केरम, चरभर से लेकर कई तरह के किस्से अतीत के वैभव खींचते हैं और भायला, भाईजी मिल मैत्री के गाढ़े मिलन को संवारते मिलते हैं।

चाहे धूप में तेजी हो या बरसात की बौछारण, पछेटों से लेकर आलू, बैंगन जैसे ओले घड़ाते हों या फिर सर्दी की छिटक्योड़ी रात-सी कंपकंपी हाड़ कंपाती हो; पाटे न सिकुड़ते, न सड़ते, न गलते हैं बल्कि ज्यों-ज्यों बीकानेरी रंगत में बांकेबिहारी बनते हैं त्यों-त्यों उजलास देते हैं। मेवाड़ में जैसे हर हंसी-खुशी के मौके पर खाट खेलण लगती है, बीकानेर में पाटे ठाठे मारने लगते हैं।

पाटे सांस्कृतिक सरोकारों के सौन्दर्यमूलक सोपान हैं। पुराने बीकानेर के किसी चौक में चले जाइये, जातीय आधार पर बड़े सुथरे ढंग से उसकी बसावट देखने को मिलेगी। हर चौक-मोहल्ले में विशाल 12 गुना 12 से लेकर 14 गुना 14 फुट तक के कलात्मक पाटे देखने को मिलेंगे।

चौक मूंदड़ों का हो या हर्षों का, व्यासों का हो चाहे आचार्यों का, कीकाणी व्यासों का हो या दम्माणियों का, रत्तानियों का हो या बारह गुवाड़ का, मोहतों का हो या लखोतियों का, डागों का हो या ढड्ढों का, रांगड़ी का हो या भट्टड़ों का, कोचरों का हो या बांठियों का या फिर सेवकों का हर चौक में पाटे जैसे पाटीदार बने अपनी पहचान दे रहे हैं। आचार्यों के चौक में पांच पाटे लगे हैं। एन सुबह से लेकर आधी रात तक ये चौक गाजेबाजे रौनक दिये रहते हैं।

बीकानेर राव बीकाजी ने बसाया। इस सम्बन्धी यह दोहा प्रचलित है-

पनरे सै पैंतालवे, सुद वैसाख सुमेर।
थावर बीज थरप्पियो, बीके बीकानेर।।

स्टेशन के पास बहुत पुरानी छोटू-मोटू जोशी की दुकान के रसगुल्लों तथा मिठाई बाजार में हल्दीराम और बीकाजी के भुजिया ने पूरे विश्व को स्वादिष्ट बना दिया है। घर-घर में बड़ी, पापड़ तथा किरचे, सुपारी के स्वादों में महिला समुदाय की हलचल चटखारे लेती मिलेगी और फिर वैसी ही यहां के निवासियों की बोली; पानी की खासियत ही है कि आदमी चंगा-ही-चंगा मिलेगा।

ढड्ढों के चौक में चान्दमल ढड्ढा की गणगौर पाटे पर बिराजती 'बैठी गणगौर' सबका आकर्षण बनती है। चान्दमलजी ढड्ढा ने सन्तान नहीं होने पर मनौती ली थी। जब सन्तान हुई तो गणगौर की पूजा शुरू की। इसकी खासियत यह कि यह अचल गणगौर है जो एक किलो हीरे-जवाहरात के विविध आभूषणों का जड़ाव लिये है। इसके साथ सन्तान रूप में 'भाईया' की प्रतिमा भी पूजी जाती है। इसके साथ पुलिस का तगड़ा पहरा रहता है। ऐसी गणगौर अन्यत्र कहीं नहीं देखी-सुनी गई। सबसे पहले डॉ. महेन्द्र भानावत ने इस गणगौर को धर्मयुग के माध्यम से जगजाहिर किया।

पाटे कइयों का सहारा होते हैं। निराश्रितों का, थकेहारों का, रैनबसेरों का, जीमण चूंटण का, थाल संस्कृति का, जनम मरण परण संस्कृति का। इनके सहारे ऊंट अपने पेट से पानी की भरी थैली निकाल प्यास बुझा पुन: यथास्थान रख देता है। ऐसे ही गोदे (सांड) छुट्टे चरते विचरते स्वच्छन्द होते हैं।

पाटा सामुदायक सौहार्द का परिचायक तो हैं ही पर कभी-कभी पट्टा समाज सन्दर्भित अमान्य धारणा के रहते व्यक्ति को सामाजिक बहिष्कार देने में भी कोई कोताई नहीं करता है। उदाहरण के तौर पर प्रसिद्ध दार्शनिक डॉ. छगन मोहता ने रूढ़िवादिता का विरोध करते अपने भाई का विवाह बाहर जाति में कर दिया। ऐसे ही जब समग्र क्रांन्ति के अग्रणी विनोबा भावे बीकानेर आये तब मोहताजी के दामाद छोटूलाल व्यास हरिजनोद्धार आन्दोलन हेतु अनशन पर बैठ गये। श्री व्यास पुष्करणा की प्रधान लालाणी कथावाचक जाति से जुड़े हुए थे तथा उनके बड़े भाई मोहनलाल व्यास सुप्रसिद्ध लक्ष्मीनारायण मन्दिर के कथावाचक थे।

पाटा पंचायत ने व्यासजी की विनोबाजी का साथ देकर हरिजनोद्धार की जागृति को समाज विरोधी प्रवृत्ति मान दोनों भाइयों को समाज से बहिष्कृत कर दिया। यह दीगर बात है कि बाद में इन्हीं व्यक्तियों की चेतना समाज के लिए आदर्श सिद्ध हुई जब नगरपालिका के सफाई कर्मचारियों ने हड़ताल कर दी तब समाज के चन्द व्यक्तियों ने नालियां साफ कर स्वच्छता का सन्देश दिया।

दम्माणियों के चौक का पाटा छतरीनुमा होने से सभी पाटों से भिन्न पहचान लिए है। इसे कोई 150 वर्ष पूर्व सेठ छगनलाल दम्माणी ने बनवाया। इसे बनाने के लिए महाराजा गंगासिंहजी से अनुमति लेनी पड़ी। छगनलालजी के पड़पोते किशनजी ने बताया कि सरकार द्वारा इसमें दो ट्यूबलाइटें दे रखी हैं। दो अन्य पड़पोते रविशंकर व सुरेश के अनुसार यह पाटा साढ़ा तीन फीट ऊंचा तथा सात फीट की लम्बाई-चौड़ाई लिए शहर का आकर्षण बना हुआ है। प्रतिवर्ष इसका रंगरोगन कराना पड़ता है। एकबार इसकी मरम्मत भी कराई। सेठजी के समय तो इस पर गद्दे-मोड़े भी लगते थे जहां पंच पंचायती भी होती।

इसकी हवा जब फिल्मनगरी तक पहुंची तो 'यादगार' नामक फिल्म का 'एक तारा बोले सुन सुन सुन' गीत की शूटिंग हेतु प्रसिद्ध अभिनेता मनोजकुमार तथा नूतन अपने कलाकारों की यूनिट सहित बीकानेर आये।

इस दृष्टि से देखा जाय तो पाटा संस्कृति ने परम्परा का निर्वाह करते बुजुर्ग पीढ़ी को नव पीढ़ी से सामंजस्य बनाते आधुनिकता के साथ सौहार्दपूर्वक एकमेक होने का भगीरथ प्रयत्न किया है।

लोकविज्ञ डॉ. महेन्द्र भानावत की निगाह में बीकानेर के रम्मती ख्यालों से लेकर यहां के सूखे साग, नमकीन तथा मिठाई जैसे व्यंजनों पर तो लिखा ही लेकिन पाटा संस्कृति भी उनकी लेखनी भी अछूती नहीं रही है। वे लिखते हैं- 'चुप्पी तोड़, तोड़ सन्नाटा, घर-आंगन की शोभा पाटा' अर्थात् बीकानेर निवासियों के लिए पाटा हर चौक, घर-आंगन की सकारात्मक ऊर्जा है। मंगल-मांगल्य का समन्दर है। ऋद्धि-सिद्धि का अखूट भण्डार है और आरोग्य निरोग का अक्षय वट है। निधि वन है। युवकों का पौरूष तथा युवतियों का दहेज है।

संक्षेप में पाटा संस्कृति एक ऐसी चौपाल है जहां घर-आंगन से अधिक सबरंग सबरूप के पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, उत्सव, आयोजन, संस्कार तथा सरोकार होते रहे हैं। ऐसे सामाजिक चेतना के संवाहक पाटे घर से भी अधिक गर्वित कहे जा सकते हैं। इस पूरी संस्कृति का शोधात्मक अनुशीलन अब कई दृष्टियों से आवश्यक हो गया है। आशा है, शोधार्थी और समाजविज्ञानी इस ओर समुचित ध्यान देंगे।

सर्वतोभद्र शैली का अमरख महादेव मन्दिर

-डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'-

हमारी आस्थाओं के आधार हैं देवालय। देव मन्दिरों की शैलियों का विकास हमेशा होता रहा है। हर मन्दिर बेजोड़ होता है। अपने आप में मौलिक और एकमेव लेकिन उनकी अपनी शैलियां भी हैं जो क्षेत्र विशेष या निर्माता अथवा स्थपति की वांशिक कार्य परम्परा की उपज होती हैं। इन मन्दिरों की शैलियों के नाम हमें वराहमिहिर पहली बार देते हैं जो संख्या में 20 हैं और इसी तर्ज पर बाद में प्रासाद विंशतियों (20-20 के समूह) का विकास हुआ। वराह का नामकरण इतना मानक हुआ कि संहिताओं, आगम, पुराण और विश्वकर्मीय शिल्प ग्रन्थों में यथारूप मिल जाता है लेकिन उनके रूप और परिभाषाएं बदली जाती रहीं।

मन्दिर का एक स्वरूप है : सर्वतोभद्र। यह भद्रिका या सर्वतोभद्र वेदी के स्वरूप में बनाया जाता है और कभी ब्रह्मा के सभी मुखों का दर्शन हो सके, उस उद्देश्य से उसका चलन हुआ लेकिन जब शिव का प्रभुत्व बढ़ा तो शिवालय भी सर्वतोभद्र बने। इसका बहुत सुन्दर उदाहरण है अमरख महादेव मन्दिर। अरावली की चीरवा और अम्बवा पहाड़ियों के बीच जहां बारहमासी सोता है, वहीं अमरखजी बिराजित हैं।

अमरख महादेव मंदिर उदयपुर-नाथद्वारा मार्ग पर उदयपुर से उत्तर में 10 किलोमीटर दूरी पर चीरवा सुरंग से पहले तलहटी में है। यह 11वीं सदी के बाद का नहीं हो सकता। पहाड़ियों की तलहटी में इसके निर्माण के लिए ऐसे स्थान को चुना गया है जो जलभरण और झंझावात आदि से अप्रभावित रहे। नागदा के सास-बहू मन्दिर, पालड़ी के वामेश्वर और एकलिंगजी के पाशुपत मन्दिर की तरह ही यह मन्दिर निश्चित रूप से लाकुलिश सम्प्रदाय का रहा होगा।

सर्वतोभद्र देवालय की योजना चार त्रिकोण से की जाती है। लंब और आधार की भुजाओं को कुछ इस तरह संयोजित किया जाता है कि मध्य में मुख्य मन्दिर हो और चारों दिशाओं में गूढ़ मण्डप सोपान सहित प्रवेश के लिए हों। भद्र का सामान्य आशय है

: भला। सर्वत या सभी ओर, सदा सर्वदा। ऐसे में यह देवालय सदैव कल्याण का धाम होता है। कहना न होगा कि इसमें मुख्य मन्दिर में चारों ही दिशाओं से प्रवेश किया जा सकता है। हां, एक और अंतराल के बाद विशाल सभा मण्डप की योजना है। इसमें भी चारों ओर से आया जाया जा सकता है।

यह भी एक रोचक प्रसंग है कि मन्दिर और मण्डप दोनों यहां स्वतंत्र भी हैं। इन दोनों के बीच अंतराल देकर मण्डप को मन्दिर के तल से ऊंचा रखा है क्यों? क्योंकि, दक्षिण को उन्नत किया जाता है। वर्तमान में जिन्होंने उद्धार किया, उन्होंने दक्षिण में भित्ति और वाटिका डाल कर विकास को रोक दिया है। सभा मण्डप को भी सर्वतोभद्र बनाया गया है। यहां के शिल्पी बड़े दक्ष रहे। निकटवर्ती घासा गांव के त्रिपुरुष देव मन्दिर की तरह इसकी भित्तियां सीधी, अनलंकृत है लेकिन पर्व सहित बांस की रचना दिखाकर कर इसकी आयु को बढ़ा दिया गया है। वर्षा, धूप और हवा से मन्दिर सहित मण्डप की सुरक्षा के लिए बनाए गए हंस पक्षीय छज्जे बड़े मनोहारी हैं और कीचक तो सुदृढ़ भारवाहक ही लगते हैं।

पिछले कई वर्षों में अमरखजी संरक्षण मंडल ने इसको बचाने के लिए क्या नहीं किया! मित्रवर श्री अनन्त गणेश त्रिवेदी इसके पर्याय ही बने लगते हैं। उनकी टीम ने इस वर्ष जीर्णोद्धार के बाद शिखर पर कलश आरोहण भी करवा दिया। मेरे लिए यह आत्मिक तीर्थ है। यहां पहाड़ बारहों मास झरते हैं और शिव सरिता प्रवाहित करते हैं।

वैशाख की चिलचिलाती धूप में भी जलधारा बीच मछलियों की मुस्कान मैं आंखों में बसाए लौटा हूं! उन जोगियों के नाम भी याद आ रहे हैं जिन्होंने कभी यहां की यात्रा का पुण्य अर्जित किया। सोमपुरा शिल्पकार इसके जीर्णोद्धार में सक्रिय रहे, जिनका उल्लेख उन्होंने स्वयं दक्षिणी द्वार की पूर्वी पट्टिका पर दर्ज किया है। यहां मुख्य उत्तरंग पर जोगी जंगम रावल का नाम लिखा है, यही नाम चित्तौड़ के कालिका माता मन्दिर में एक स्तंभ पर उत्कीर्ण है।

(विशेष विवरण : मेवाड़ का प्रारंभिक इतिहास)

बाजार / समाचार

इंटलेक्ट कंपोज्ड इंटलेक्ट डिजिटल कोर लॉन्च

उदयपुर (ह. सं.)। दुनिया की अग्रणी बैंकिंग और बीमा ग्राहकों के लिए क्लाउड-नेटिव, भविष्य के लिए तैयार, मल्टीप्रोडक्ट फाइनेंशियल टेक्नोलॉजी कंपनी इंटेलेक्ट डिज़ाइन एरिना लि. ने भारत में सहकारी बैंकों के लिए इंटेलेक्ट डिजिटल कोर लॉन्च करने की घोषणा की है। यह समग्र, एंटरप्राइज़-ग्रेड वाला बैंकिंग टेक्नोलॉजी सुइट से बना है, जो दुनिया का सबसे बड़ा ओपन फाइनेंस प्लेटफ़ॉर्म है जिसे वित्तीय संस्थानों के लिए भविष्य के लिए तैयार टेक्नोलॉजी समाधान प्रदान करने के लिए' फर्स्ट प्रिंसिपल्स' थिंकिंग द्वारा निर्मित किया गया है। दुनिया के कुछ सबसे बड़े बैंकों को चलाने वाली संयोजनीय और प्रासंगिक कोर बैंकिंग तकनीक का लाभ उठाते हुए, इंटलेक्ट सहकारी बैंकों के लिए डिजिटल इंडिया पहल के रूपमें विशेषज्ञता उपलब्ध कराता है। एसवी रमणन, सीईओ-भारत और दक्षिण एशिया,इंटलेक्ट डिज़ाइन एरिना ने कहा कि तीन दशकों की डोमेन विशेषज्ञता और अपने 'डिज़ाइन थिंकिंग' पर ध्यान केंद्रित करने के साथ, हमने सहकारी बैंकों के लिए इंटलेक्ट डिजिटल कोर लॉन्च किया है। समकालीन बैंकिंग परिदृश्य में, ग्राहकों की अपेक्षाओं मैं विकास हुआ है,और अब वे जिन बैंकों से जुड़ते हैं, उनसे डिजिटल फ्रंट-एंड सुविधाओं की माँग करते हैं।

को-लैब इनिशिएटिव के तहत दो स्टार्टअप्स का चयन

उदयपुर (ह.सं.)। भारत के निजी क्षेत्र के अग्रणी बैंक एचडीएफसी बैंक ने एक उद्यम पूंजी फर्म प्रवेगा वेंचर्स के सहयोग से आज अपनी को-लैब इनिशिएटिव के तहत दो इनोवेटिव स्टार्टअप्स के चयन की घोषणा की है। को-लैब कार्यक्रम के सह-मालिकों के रूप में बैंक और प्रवेगा वेंचर्स ने ऐसे स्टार्टअप्स की पहचान की है जो आधुनिक बैंकिंग चुनौतियों का समाधान करने और फिनटेक क्षेत्र में नवाचार को बढ़ावा देने की असाधारण क्षमता प्रदर्शित करते हैं।

को-लैब, एचडीएफसी बैंक और प्रवेगा वेंचर्स के बीच एक संयुक्त कार्यक्रम है, जिसका उद्देश्य फिनटेक में अत्याधुनिक समाधान पेश करने वाले स्टार्टअप्स की पहचान करना और उनके साथ साझेदारी करना है। पिछले साल लॉन्च किया गया को-लैब कार्यक्रम ग्राहकों को नवीन उत्पाद और सेवाएं प्रदान करने के लिए स्थापित वित्तीय संस्थानों और उभरते स्टार्टअप्स के बीच सहयोग को और आगे ले जाना चाहता है।

मारवाड़ी कैटलिस्ट्स ने स्टार्टअप्स के लिये 100 करोड़ का फंड लॉन्च किया

उदयपुर (ह. सं.)। स्टार्टअप एक्सेलेरटेर मारवाड़ी कैटलिस्ट्स जो कि भारत के टियर 2- टियर 3 शहरों में उद्यमशीलता की भावना को जाग्रत कर रहा है ने अपने पहले अल्टरनेटिव इन्वेस्टमेंट फंड एआईएफ कैट 1 ऐंजल फंड के लिये सेबी से स्वीकृति हासिल कर ली है। 300 स्टार्टअप्स को समर्थन देने के लिये समर्पित 100 करोड़ रूपये के फंड के साथ मारवाड़ी कैटालिस्ट्स एमकैट्स ने 9000 से ज्यादा स्टार्टअप्स का मूल्यांकन कर उसमें से 80 से अधिक स्टार्टअप्स का एक प्रभावशाली पोर्टफोलियों बनाया है और इनमें से 8 ने महत्वपूर्ण तरक्की हासिल की है।

मारवाड़ी कैटालिस्ट्स के संस्थापक और सीईओ सुशील शर्मा ने कहा कि राजस्थान का पहला एआईएफ कैट1 फंड लॉन्च कर रोमांचित हैं। यह पहल स्टार्टअप्स को आगे बढ़ने के लिए आवश्यक मार्गदर्शन, कनेक्शन और संसाधन प्रदान करने की हमारी प्रतिबद्धता को उजागर करती है। ये स्टार्टअप, सामूहिक रूप से 500 करोड़ से ज्यादा का राजस्व उत्पन्न कर रहे हैं, 2000 से अधिक लोगों को रोजगार दे रहे हैं, और 350 करोड़ से ज्यादा का फंड जुटा रहे हैं।

'वोट सॉलिड, देश सॉलिड' अभियान

उदयपुर (ह. सं.)। बांगुर सीमेंट ने न्यूज18 नेटवर्क के सहयोग से 'वोट सॉलिड, देश सॉलिड' अभियान शुरू किया है, जो भारतीयों को उनके वोट में निहित परिवर्तनकारी शक्ति की याद दिलाने की दिशा में एक बड़ा योगदान है। ऐसे देश में जहां चुनाव सिर्फ एक सामान्य घटना नहीं बल्कि लोकतांत्रिक यात्रा में मील का पत्थर साबित होता है, वहाँ 'वोट सॉलिड, देश सॉलिड' अभियान के तहत नागरिकों को उनकी जिम्मेदारी का एहसास कराना सराहनीय कदम है।

बांगुर सीमेंट के मार्केटिंग हेड, सुश्रुत पंत ने कहा कि अभियान में 12.50 लाख से अधिक व्यक्तियों ने 'वोट का वचन' के लिए प्रतिबद्धता जताई है, जो अत्यंत सराहनीय है। हम ठोस घरों के निर्माण के लिए प्रतिबद्ध हैं और बांगुर सीमेंट प्रदान करके सामाजिक कल्याण में योगदान देने की अपनी प्रतिज्ञा को पूरा कर रहे हैं। इस कैंपेन के जरिए बांगुर सीमेंट ने हर क्लिक पर एक किलोग्राम सीमेंट नि:शुल्क दान करने की घोषणा की है। इस पहल का उद्देश्य भारत में बेघर और वंचित लोगों के सामने आने वाले आवास संकट को कम करने की ओर बांगुर सीमेंट का योगदान है। इस पहल के तहत पहला दान 22 मई को उदयपुर जिले के ग्रामीण इलाके में किया गया, जिससे 11 आदिवासी परिवारों को लाभ प्राप्त हुआ है।

पिम्स हॉस्पिटल में टीएमएस न्यूरोस्टिमुलेशन टेक्नोलॉजी लैब का उद्घाटन

उदयपुर (ह. सं.)। पेसिफिक इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज, पिम्स हॉस्पिटल, उमरड़ा में एक अद्वितीय पहल की शुरुआत करते हुए अपनी नवाचारी उन्नत टीएमएस (ट्रांसक्रेनियल मैग्नेटिक स्टिमुलेशन) न्यूरोस्टिमुलेशन टेक्नोलॉजी लैब का उद्घाटन किया। लैब का उद्घाटन चैयरमेन आशीष अग्रवाल, शीतल अग्रवाल और अव्य अग्रवाल की उपस्थिति में पिम्स के एक्ज्यूकेटिव डायरेक्टर नमन अग्रवाल द्वारा किया गया।

समारोह में विभिन्न अतिथियों को सम्मानित किया गया। इनमें प्रसिद्ध मनोचिकित्सक और संज्ञानात्मक न्यूरोसाइंटिस्ट प्रोफेसर प्रवीण खैरकर शामिल हैं, जो मनोचिकित्सा और संज्ञानात्मक न्यूरोसाइंस विभाग के प्रमुख हैं। प्रोफेसर खैरकर, प्रसिद्ध बीआईडीएमसी हार्वर्ड मेडिकल स्कूल से प्रशिक्षित हैं। वे औद्योगिक उन्नति की गहरी ज्ञान की शिक्षा देंगे जिससे न्यूरोलॉजिकल बीमारियों के उपचार में आगे कदम बढ़ने की उम्मीद है। तकनीकी टीम का नेतृत्व आईआईटी खड़गपुर के राजेश खैरकर करेंगे जिससे लैब की कार्यक्षमता प्रौद्योगिकीकरण के मौजूदा मानकों में शीर्ष पर रहेगी। प्रिंसिपल सुरेश गोयल ने टीम के सहयोगी प्रयासों की प्रशंसा की।

चिकित्सा मनोविज्ञान के सहायक प्रोफेसर डॉ. आर्चिश खिवसेरा ने टीएमसी की प्रमाण-आधारित प्रैक्टिस की व्याख्या की, जबकि मुर्ताजा, सुशील और इंद्रपाल ने रोगियों के प्रोटोकॉल का प्रदर्शन किया। ट्रांसक्रैनियल मैग्नेटिक स्टिमुलेशन (टीएमसी) मस्तिष्कीय और स्नायुतात्मक विकारों के इलाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ब्रेन गतिविधि को संशोधित करके यह गैर-चिकित्सीय न्यूरोमोडुलेशन प्रदान करता है, जो डिप्रेशन, चिंता और अटल दर्द जैसी स्थितियों में सहायक होता है। स्नायुरोग में, टीएमसी स्ट्रोक पुनर्वास और पार्किंसन की बीमारी के प्रबंधन में मदद करता है, और मोटर विकारों को संबोधित करने में सहायक होता है। उद्घाटन समारोह में पिम्स के फेकल्टी मेम्बर्स, रेजीडेंट्स एवं आरएनटी मेडिकल कॉलेज, गोतांजलि मेडिकल कॉलेज एवं पेसिफिक मेडिकल कॉलेज एंड हॉस्पिटल के चिकित्सक उपस्थित थे। पिम्स उमरड़ा में न्यूरोस्टिमुलेशन टेक्नोलॉजी लैब से एक नया अध्याय जुड़ गया है।

शिक्षा संबल कार्यक्रम से 1400 से अधिक विद्यार्थी लाभान्वित

उदयपुर (ह.सं.)। हिन्दुस्तान ज़िंक द्वारा चलाये जा रहे शिक्षा संबल कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण शिविरों में पंतनगर, रूद्रपुर उत्तराखण्ड सहित राजस्थान के उदयपुर, सलूम्बर, राजसमंद, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, शाहपुरा एवं अजमेर के राजकीय विद्यालयों के 1400 से अधिक बच्चें उत्साह से भाग ले रहे है।

इन प्रशिक्षण शिविरों में बच्चों को विज्ञान, गणित और अंग्रेजी विषयों के साथ ही शारीरिक, खेलकूद, बौद्धिक और सांस्कृतिक गतिविधियों से जोडकर उनके सर्वांगिंण विकास की और अग्रसर किया जा रहा है। हिन्दुस्तान ज़िंक द्वारा विद्या भवन सोसायटी उदयपुर के सहयोग से सीनियर सैकण्डरी स्कूल में आयोजित कार्यक्रम में ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण शिविर की औपचारिक शुरूआत की गयी। 18 जून तक आयोजित होने वाले इस आवासीय प्रशिक्षण शिविर में 300 से अधिक बच्चें 8 वीं, 10 वीं कक्षा एवं 12वीं कक्षा के मार्गदर्शन हेतु भाग ले रहे है। ज़िंक द्वारा जावर, दरीबा, देबारी चित्तौड़गढ़, आगूचा, और कायड़ में इसी प्रकार के आयोजित 12 शिविरों में 1100 से अधिक बच्चें लाभान्वित हो रहे हैं। उद्घाटन अवसर पर ज़िंक की हेड सीएसआर अनुपम निधि, विद्या भवन सोसायटी के मुख्य कार्यकारी अधिकारी हंसराज चैधरी, डॉ. अनुराग प्रियदर्शी, मनीषा जोशी एवं अतिथिगण उपस्थित थे।

जेके टायर को अब तक का सर्वोच्च राजस्व एवं लाभ

उदयपुर (ह. सं.)। जेके टायर एण्ड इण्डस्ट्रीज लि. (जेके टायर) ने वित्त वर्ष 2024 के लिये अंकेक्षित परिणामों की घोषणा की है। कम्पनी के निदेशक मण्डल ने 4.50 रूपये प्रति इक्विटी शेयर (एक रूपये प्रति इक्विटी शेयर अंतरिम लाभांश जो कि पहले ही दिया जा चुका है सहित) की दर से लाभांश देने का प्रस्ताव रखा है जोकि 31 मार्च 2024 को समाप्त वित्तीय वर्ष के लिये 225 प्रतिशत है।

चेयरमैन एण्ड मैनेजिंग डायरेक्टर डॉ. रघुपति सिंघानिया (सीएमडी) ने कहा कि वित्त वर्ष 2024 के दौरान जेके टायर ने अब तक की सबसे अधिक बिक्री एवं लाभ दर्ज किया। बिक्री हल्के सुधार के साथ 15046 करोड़ रूपये रही, जबकि एबिडिटा 59 प्रतिशत बढ़कर 2122 करोड़ रूपये एवं कर पश्चात लाभ दोगुणा बढ़कर 811 करोड़ रूपये हो गया।

इस प्रदर्शन का श्रेय हमारे निरन्तर उत्पाद प्रीमियरीकरण, बाजार पहुंच का विस्तार एवं तकनीकि सक्षम विनिर्माण और बेहतर दक्षता हासिल करने के लिये सभी परिचालनों के डिजीटलीकरण को जाता है।

जेके टायर की सहायक कंपनियां, कैवेंडिश इंडस्ट्रीज लि. (सीआईएल) और जेके टॉर्नेल, मैक्सिको, कंपनी के समग्र राजस्व और लाभप्रदता में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे है। वित्त वर्ष 24 के दौरान, जेके टायर ने क्यूआईपी के माध्यम से 500 करोड़ रुपये जुटाए।

एचडीएफसी को 500 मिलियन अमेरिकी डॉलर का वित्तपोषण

उदयपुर (ह. सं)। एचडीएफसी बैंक को 500 मिलियन अमेरिकी डॉलर का आईएफसी वित्तपोषण मिलने से वित्त तक पहुंच करने में सहायता होगी। इसका लक्ष्य देश में वित्तीय समावेशन और सामाजिक-आर्थिक विकास को बढ़ावा देने, आय सृजन उद्देश्यों के लिए ऋण देने में सहायता करना है।

अरुप रक्षित, ग्रुप हेड, ट्रेजरी, एचडीएफसी बैंक ने कहा कि महिलाओं को ऋण देने के लंबे इतिहास वाला बैंक, सतत आजीविका पहल (एसएलआई) में नामांकित स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) और ज्वाइंट लायबिलिटी ग्रुप (जेएलजी) को सूक्ष्म ऋण के रूप में आगे ऋण देने के लिए आईएफसी के वित्तपोषण का उपयोग करेगा। एसएलआई बैंक की व्यावसायिक शाखा है जो विशेष रूप से महिला उधारकर्ताओं के लिए माइक्रोफाइनेंस ऋण कार्यक्रमों के लिए जिम्मेदार है। आईएफसी का ऋण बैंक को महिलाओं के लिए अपने माइक्रोक्रेडिट और माइक्रोलेंडिंग को बढ़ाने में सक्षम करेगा, विशेष रूप से एसएचजी और जेएलजी उधारकर्ताओं को व्यक्तिगत ऋण योजनाओं में स्नातक करने की अनुमति देगा।

भारतीय ज्ञान श्रम, अनुभूति और अनुसंधानों का परिणाम - डॉ. पाण्ड्ेय

उदयपुर (ह. सं.)। जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में मुख्य वक्ता ज्योतिर्विद पंडित रामनारायण शर्मा ने कहा कि ज्योतिष विषय अपने आप में अतंयन्त व्यापक और विस्तृत विषय है। इसमें पुराणों के ज्ञान के साथ ग्रह नक्षत्रों के साथ अजर अमर आत्मा की जीवन यात्रा तथा कर्मों का गहन अंर्तसंबंध है।

प्रधानमंत्री के पूर्व वैज्ञानिक सलाहकार डॉ. ओ.पी. पाण्ड्ेय ने कहा कि भारतीय ज्ञान प्रणाली ज्ञान, विज्ञान और प्रज्ञान तीनों आयामों को आत्मसात करने की अनूठी परम्परा है। भारतीय ज्ञान पुस्तकीय ज्ञान की परिधी से कहीं उपर श्रम, अनुभूति और अनुसंधानों का ज्ञान है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में ज्ञान के स्थान पर रटने की परिपाटी गंभीर चिन्तन का विषय है। कुलपति प्रो. एस.एस. सारंगदेवोत ने कहा कि भारतीय ज्ञान परम्परा को आज पूरा विश्व अपना रहा है। आवश्यकता है हमारे ज्ञान को युवा पीढ़ी में रूपांतरित करने की। संगोष्ठी में के.के. कुमावत, प्रो. सरोज गर्ग, डॉ. कला मुणेत, प्रो. मंजु मांडोत, डॉ. पारस जैन, डॉ. हेमेन्द्र चौधरी, प्रो. आईजे माथुर, डॉ. राजन सूद, डॉ. अमी राठौड़, डॉ. अमीया गोस्वामी, प्रो. एसएस चौधरी, डॉ. लीली जैन, डॉ. बबीता रसीद, डॉ. कुलशेखर व्यास, डॉ. भूरालाल श्रीमाली, डॉ. अपर्णा श्रीवास्तव, डॉ. मधु मुर्डिया, डॉ. सुनील चौधरी, डॉ. प्रतीक जांगीण, डॉ. केके त्रिवेदी, डॉ. सुरेन्द्र सिंह डॉ. गुणबाला आमेटा उपस्थित थे।

सिद्धों के जाप सबद और कामड़ लोकगाथाएं लोकार्पित

उदयपुर (ह. सं.)। लोक साहित्य मनीषी डॉ. महेंद्र भानावत का मत है कि मेवाड़ में वाचिक और कंठ आधारित साहित्य की सुदीर्घ परंपरा रही है जो अभी भी सुरक्षित है और शोध के योग्य हैं। डॉ. भानावत ने यह बात डॉ. चम्पादास कामड़ की नवीन पुस्तक 'सिद्धों के जाप सबद और कामड़ लोकगाथाएं' का लोकार्पण करते हुए कही। अपने आवास पर एक संक्षिप्त आयोजन में उन्होंने मेवाड़ की सिद्ध, योगी, संत और साधकों की परंपराओं को रेखांकित किया।

उनका कहना था कि बदलती परिस्थितियों के कारण वाचिक परम्परा में प्रचलित बातों का विलुप्त होने का खतरा बहुत अधिक होता है। उनका दस्तावेजीकरण बहुत महत्वपूर्ण कार्य है। सिद्ध समुदाय के जाप शब्दों का संग्रह एवं प्रकाशन लोकसाहित्य का एक अतुल्य कार्य सम्पादन हुआ है। इससे लुप्त हो रही भारतीय सिद्ध साहित्य की परंपरा का संरक्षण होगा तथा जिज्ञासु लोग पुस्तक की सहायता से शंखा ढाल, हिंगलाज माता पूजन, बाबा रामदेवजी के निजार पंथ, अलख उपासी कामड़ संतों के आध्यात्मिक मार्ग एवं मारवाड़ी लोकगाथाओं का अधिक से अधिक अवगाहन कर सकेंगे।

डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' ने स्पष्ट किया कि तिब्बत से लेकर गांधार तक और हिमालय से गिरणार तक सिद्धों की समृद्ध विरासत रही है। सिद्धों, साधकों के पास अपने विभिन्न कार्यों के लिए विशिष्ट जाप होते हैं और वे सिद्धि की तरह गोपनीय रखे जाते हैं। कोई शिष्य होकर उनको प्राप्त करता है। राजस्थान में साबर मंत्रों के रूप में ऐसे जाप आज तक बचे रहे हैं जिनको सबद भी कहा जाता है। ये कंठ कोश या वाचिक परम्परा में रहे हैं। पहली बार इनका प्रकाशन हुआ है।

लेखक डॉ. चंपादास कामड़ ने कहा कि पिछले लगभग 35 वर्षों के श्रम सहित संगति, विश्वास और भेंट उपचार के बाद ऐसे जाप सबदों का संग्रह और संपादन उनके आनुष्ठानिक विधान समेत संभव हो सका है। इसके लिए कई क्षेत्रों की यात्राएं की और कई साधकों, दीक्षितों से भेंटकर यह कार्य पूरा किया।

डॉ. तुक्तक भानावत ने पुस्तक की उपयोगिता बताई और कहा कि लंबे अध्ययन और विश्लेषण की सुन्दर अनुभूतियां इस पुस्तक में देखी जा सकती हैं। यह आने वाले समय में अनेक शोध कार्यों की प्रस्थान बिंदु सिद्ध होगी। आयोजन में जिनेन्द्र दास, अर्थांक भानावत आदि ने भी भागीदारी की।

पालीवाल अध्यक्ष, जावेरिया मानद सचिव बने

उदयपुर (ह. सं.)। इंस्टीट्यूशन ऑफ इंजीनियर्स (इंडिया) उदयपुर लोकल सेंटर (मुख्यालय कोलकत्ता) के सत्र 2024-2026 के लिए सम्पन्न हुए चुनाव में अध्यक्ष पद पर इंजीनियर पुरुषोत्तम पालीवाल एवं मानद सचिव पद पर इंजीनियर पीयूष जावेरिया निर्वाचित हुए। यह सत्र नवम्बर 2024 से प्रभावी होगा।

बनजारा समाज के विदाई गीत

- श्याममनोहर व्यास-

'बनजारा' राजस्थान की एक ऐसी घुम्मक्कड़ जाति है जो अन्य प्रदेशों में पहुंच कर भी अपनी परम्परा को बहुत कुछ सुरक्षित रखे हुए है। भारत में बनजारा और यूरोप की घुमंतू जाति 'जिप्सी' दोनों का मूल निवास स्थान राजस्थान एवं पंजाब रहा है।

बनजारों के लोकसाहित्य में जिन स्थानों और ऐतिहासिक पुरुषों का उल्लेख मिलता है, उनसे यह प्रकट होता है कि इन लोगों का मूल स्थान जैसलमेर से लेकर चित्तौड़ तक था। राजस्थान के दक्षिण भू-भाग अर्थात् खेरवाड़ा तहसील व डूंगरपुर जिले में 'बनजारा' जाति के कई गांव बसे हैं। यहाँ 'बनजारा' को 'लबाना' कहा जाता है। लेखक को इनके रीति-रिवाज एवं इनकी संस्कृति तथा जीवन प्रणाली को देखने का अवसर मिला है। आन्ध्र, कर्नाटक जैसे दक्षिण भारत में स्थित प्रदेशों में भी ये लोग बस गए हैं। प्राचीनकाल में यह जाति कई उपजातियों में बंटी हुई थी और नमक, अनाज तथा अन्य खाद्य सामग्री का व्यापार करती थी। पशुधन का क्रय-विक्रय भी इनमें प्रचलित था। हिन्दुओं की अन्य जातियों की तरह ही इनमें भी विवाहोत्सव के रीति-रिवाज प्रचलित हैं। पाणिग्रहण से लेकर लड़की की विदाई तक महिलाएं अपने भाव-विभोर गीतों द्वारा श्रोताओं का ध्यान बरबस ही अपनी ओर आकर्षित करती हैं।

विदाई के समय माता-पिता अपनी सामर्थ्य के अनुसार लड़की को दहेज देते हैं। मां-बाप सोने के आभूषण अथवा चाँदी या गिलट के गहने प्रदान करते हैं। बरसों में तैयार किए गए कपड़े दिए जाते हैं। दहेज में दिया जाने वाला सामान गोणियों में भर कर दिया जाता है। दहेज में बैल देने की भी प्रथा है। बारात के प्रस्थान के पहले नेगों का भुगतान होता है। वधू अपने माता-पिता, भाई-बहिनों के गले मिल कर रोती है और पिता के घर में व्यतीत किए दिनों को याद कर भाव विभोर हो उठती है। विदाई का समय आ जाता है किन्तु युवती घर से बाहर निकलना ही नहीं चाहती। अन्त में उसे घर से बाहर घसीटते हुए लाते हैं। वह पिता को पकड़ कर कहती है -

बापू रे तारे पगड़ी रे पेचे मा घालन घड़ी एक,
गोक लो बापू ओ, आहिया।
धंदला-सा पेटे मा गोक लो घालन बापू ओ,
आहिया।

(अर्थात् अरे बापू (पिता), तुम्हारी पगड़ी के पेच में रख कर घड़ी भर छिपा लो मुझे। तुम्हारे थुल-थुल पेट में रख कर मुझे छिपा लो।) अपने भाई को पकड़ कर वह विलाप-सा करती है -

तारे झरमरिया से खीसे मा
घालन घड़ी एक गोक लो वीरन्ना आहिया

(तुम्हारी झिलमिलाती-सी जेब में मुझे एक घड़ी के लिए छिपा लो, भाई।)

भाई को छोड़ कर फिर वह पिता की ओर मुड़ती है और चीत्कार उठती है -

सीक द रे बापू सीक द तारी सीकेन,
भाँदू छेड़ा छेवटियो बापू ओ।

(मुझे सीख दो, तुम्हारी सीख को मैं पामड़ी के कोने में बांध लूंगी, बटुए में रख लूंगी, ओ बापू) इतना कहने के बाद लड़की फिर घर में चली जाती है और इस तरह बैठ जाती है जैसे उसे कहीं जाना नहीं है। घर के लोग जबर्दस्ती उसे घर से बाहर लाते हैं। दहेज में दिया जाने वाला बैल वहाँ लाया जाता है। लोग सहायता देकर लड़की को उस बैल पर खड़ा करते हैं। लड़की रोती हुई कहती है -

हवेली ए छूट मत जाएस मार बापू री
मड़गी, हरी भरी रेस आहिया।

(मुझसे बाप की हवेली छूट न जाए। मेरा बाप का घर भरा पूरा रहे।)

वर इस समय तक किसी घर में बैठा रहता है। कुछ लोग वहाँ से उसे लाते हैं। वर वधू के घर में जाता है। देवी के सामने सुपारी, सरोता और कटारी रखकर बाहर आ जाता है। लड़की हृदय विदारक विलाप करती है -

दावड़ा, नगरी छूटी, छाती फाटी दावड़ा,
बागे मा खादो, बागे मा पीदो, बागे मा सूतो।
बागे मा गजायो सारी रात रे, हाँ,
सासू र हटको, ससरे रो हटको
न मानो पंथिया,
चाले चलाऊ घोड़ो भिड़ो रे हाँ।

(हे दावड़ा (पति)! नगरी छूट गई, छाती फट गई, ओ पति ! मैंने इस बाग में भोजन किया। इसी बाग में पानी पिया। इसी बाग में मैं सोई! सासू ने मना किया, ससुरे ने मना किया, किन्तु बटोही माना नहीं) वर कहता है अब चल भी, यह लो मैं घोड़े पर चढ़ गया। वर बड़ों को नमन करता है। वह सास को नमन करने के लिए जाता है। सास उसके गले लग कर कहती है -

बापू रे, मारी बेटी रे सो गुना वे,
तो तारे खोले मा घाल लेस रे बापू ओ-आहिया;
बापू रे बारी गुना कीदी तो तारे पेटे मा घालन,
समंदर कर लेस रे बापू ओ, आहिया।

(बाबू, मेरी बेटी सौ अपराध करे तब भी उन अपराधों को अपनी झोली में रख लेना ओ बाबू! मेरी बेटी बारह अपराध करे तब भी तुम अपने पेट में उन्हें इस तरह रखना जैसे समुद्र में डाल दिए गए हों।) सास से विदा लेकर वह साली व सलहज को एक-एक रुपया देकर आगे बढ़ता है। विदाई के समय वर-वधू और वर का पिता एक गाड़ी में बैठते हैं। गांव के बाहर एक स्थान पर बारात रुकती है। यहाँ महिलाएं वधू को अन्तिम विदा देती हुई गाती हैं -

राम राम सजतो आयो रे भूरिया,
रामेर दवाई छ।
नरवेली री जोड़ी लायो रे भूरिया,
राम दवाई छ।

बारात जब लड़की के ससुराल पहुंच जाती है तो वर की माता व बहिनें वर-वधू के स्वागत में गीत गाती हैं। बारातियों को भोजन खिला कर सीख दे दी जाती है। घर में देवता की पूजा कर वर-वधू को आशीर्वाद दिया जाता है। कुछ समय बाद जब वधू का भाई पीहर से उसे लेने आता है तो भाव-विभोर होकर वह गाती है -

वीरेणा सो कोसे न कोस करन आयेसे वीरणा-
आहिया,
वीरेणा सात समंदरे न पार करन आपणी भेनड़ छ
करन आयेसे
वीरणा आहिया।

(भैया, तुम सो कोस को एक कोस समझ कर आए हो। यह जानकर कि मैं ससुराल में हूं, मेरा भाई सात समुद्र पार करके यहाँ आया है।) लड़की करुण कंठ से सहेलियों को सम्बोधित करती है-

सातेणो केला-केवड़े रे झुंडे माई ती
एकली न छोड़ चाली सातणो-आहिया।

(साथ की सहेलियों, केले और केवड़े के झुंड में मुझे अकेली छोड़ चली हो, साथ की सहेलियों) जब भाई, बहिन को ससुराल से विदा कराता है तो लड़की सहेलियों एवं उसकी भावज को एक-एक रुपया देता है।

इस रिवाज को 'हाथ घालना' कहते हैं। बनजारा समाज में विवाह का लग्न निकालने वाला 'साद' कहलाता है। यह भी उसी समाज का होता है। यह सत्य है कि समय की मांग के अनुसार इस समाज में काफी परिवर्तन की लहर आ रही है।

लोकसंस्कृति मनुष्य को श्रेष्ठतम बनाती है

- वसन्त निरगुणे -

लोक संस्कृति में 'लोक' और संस्कृति दोनों महत्त्वपूर्ण हैं। लोक जितना व्यापक है, उतनी ही व्यापक संस्कृति है। लोक का अर्थ देखने से है। मनुष्य जितनी दूर तक बाहर और अपने भीतर देख सकता है, वह लोक है। यह देखना भी ऐसा वैसा नहीं है, समस्त व्यष्टि और समष्टि को देखना है। जड़-चेतन सारा चराचर जगत, जहाँ-जहाँ तक समाया है, यानी सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड लोक के भीतर समाहित है। वेद व्यास ने लोक को यथार्थ रूप से देखने वाले व्यक्ति को व्यक्ति माना है। प्रत्यदर्शी लोकानां सर्वदर्शी भवेन्नरः। जो लोक को अपनी आँखों से देखता है, वही व्यक्ति लोक को समझ सकता है। शतसाहस्री संहिता की इस सूक्ति से लोक की व्यापकता स्पष्ट होती है।

वेदों के बाद उपनिषद काल में जैमिनीय ब्राह्मण ग्रन्थ में कहा गया है- बहु व्याहितो वा अयं बहुशो लोकः। यह लोक अनेक प्रकार से फैला हुआ है। बालक पहली बार अपनी आँखों को इस लोक में खोलता है और मूँदने तक इस लोक को देखता है। इस अवधि में मनुष्य जीवन और संसार के कई अनुभवों से गुजरता है। मनुष्य अपने आसपास इसी अनुभव के आधार पर जो जीवन का ताना-बाना बुनता है, वही लोक है। साधारण जनता के लिये लोक का प्रयोग ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर किया गया है। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में 'लोक' शब्द का व्यवहार जीव तथा स्थान दोनों अर्थों में किया है। महा वैयाकरणाचार्य पाणिनी ने अपनी अष्टाध्यायी में 'लोक' और 'सर्व लोक' शब्दों का उल्लेख किया है। वररूचि ने अपने वार्तिकों में भी लोक शब्द का प्रयोग किया है। यह सूर्य की तरह सत्य है कि वेदों की रचना से पूर्व लोक की सत्ता थी। परलोक की धारणा भी इसी लोक से उत्पन्न हुई होगी। तीन पृथ्वी, आकाश और पाताल लोक की कल्पना अनेक मिथकथाओं में मिलती है। सात लोक चौदह भुवन का जिक्र अनेक बार कथाओं में आता है। पृथ्वी को 'पृथ्वीलोक' की संज्ञा दी जाती है। लोक का रूढ़ अर्थ संसार है, लेकिन यह अर्थ लोक को बहुत संकुचित कर देता है। लोक का अर्थ बहुत विशाल है। लोक समूचे जीव, प्रकृति, जीवन, स्वर्ग-नर्क, कल्पना-यथार्थ का नाम है। लोक सृष्टि के अन्दर और बाहर फैला है। लोक सब जगह है। मनुष्य के आसपास लोक होता है।

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल ने लोक को महासमुद्र माना है। उनका कहना है- ''लोक हमारे जीवन का महासमुद्र है। उसमें भूत, भविष्य और वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। लोक ही राष्ट्र का अमर स्वरूप है। लोक राष्ट्र की अमूल्य निधि है। हमारे इतिहास में जो भी सुन्दर तेजस्वी तत्व हैं, वह लोक में कहीं-न-कहीं सुरक्षित हैं। लोक, लोक की धात्री सर्वभूत माता पृथ्वी और लोक का व्यक्त रूप मानव। यही हमारे नये जीवन का अध्यात्म शास्त्र है।''

जहाँ तक लोक है, वहाँ तक संस्कृति है। लोक प्रकृति और जीवन से निर्मित है। इसमें बाह?य प्रकृति उत्प्रेरक का कार्य करती है और मनुष्य के भीतर की प्रकृति संस्कृति की रचना करती है। लोक और प्रकृति इस अर्थ में एक दूसरे के परिपूरक कारक हैं। प्रकृति और लोक से संस्कृति बनती है। संस्कृति कहीं बाहर से नहीं उपजती । मनुष्य की सामू?हिक चेतना ही उसका निर्माण करती है। यही लोकसंस्कृति के नाम से जानी जाती है। लोकसंस्कृति व्यक्तिगत नहीं होती, समष्टिगत होती है। व्यक्ति संस्कृति का निर्माता, नियन्ता और संवाहक होता है। उसमें आदि और लोक की समस्त अवधारणाएँ और यथार्थ समाहित होता है, जो जीवन के धरातल पर आधारित होता है। संस्कृति में किसी जाति, समाज और देश की स्वप्न और स्मृतियाँ अन्तर्निहित होती हैं इसीलिए संस्कृति मनुष्य के पहचान और प्रतिष्ठा की वस्तु बनती है। कोई व्यक्ति , समाज और देश बिना संस्कृति के संभव नहीं है। यहाँ तक कि जीवन में काम आने वाली भौतिक वस्तुओं तक में संस्कृति के मूल चिन्हों की, स्पष्ट छाप देखी जा सकती है। भौतिक सामग्रियों में पुरानी-से-पुरानी और नई-से-नई संस्कृति के स्मृतिचिन्ह मिल सकते हैं। मिट्टी, पत्थर, धातु आदि में उकेरे विभिन्न जातीय रूपाकार मनुष्य की ऐतिहासिक संस्कृति के सबूत होते हैं। विश्व की पुरातन संस्कृतियों के चिन्ह इन्हीं पुरा अवशेषों में मिले हैं जिनके आधार पर उस काल की स्थापत्य कला के साथ लोकसंस्कृति के और इतर बाह?य तथा आन्तरिक अनुषंगों की पहचान होती है।

लोकसंस्कृति जीवन की जीवन्त सम्यक कृति का नाम है। यह लोकसंस्कृति मनुष्य के संस्कार से बनती है। उसकी बौद्धिक, धार्मिक, सामाजिक राजनैतिक, साहित्यिक, कलात्मक और रचनात्मक कार्यकलाप की क्षमताओं से ज्ञात होती है। किसी भी देश की संस्कृति, विशेषकर मनुष्य जीवनशैली के अतिरिक्त सबसे अधिक कला और वाचिक परम्परा में अभिव्यक्त होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि संस्कृति में वे सभी तत्व, अभिप्राय मौजूद होते हैं, जो मनुष्य को संवेदनशील और जगत की सर्वश्रेष्ठ कृति बनाते हैं।

PIMS PACIFIC INSTITUTE OF MEDICAL SCIENCES

HOSPITAL UMARDA

Umarda Railway Station Road, Udaipur, (Raj.)

www.pacificmedicalsciences.ac.in info@pacificmedicalsciences.ac.in 0294-3510000

ADMISSION OPEN 2024-25

ADMISSION HELPINE : 9587890082, 9587890063, 9358883194

PIMS PACIFIC INSTITUTE OF MEDICAL SCIENCES
(Approved by NMC)
9587890081, 9587890096
- M.B.B.S.
- MD/MS
- M.Sc. in Medical Sciences

PIMS VENKTESHWAR INSTITUTE OF PARAMEDICAL SCIENCES
9257016003, 9587890142
- **Diploma**

Radiation Technology, Operation Theater Technology, Medical Laboratory Technology, ECG Technology, Cath Lab Technology. Dialysis Technology, Blood Bank Technology, Endoscopy Technology, EEG Technology, Ophthalmic Technology

- **B.Sc.**

Medical Lab Technology, Ophthalmic Technology, Radio Imaging Technology

PIMS RESEARCH PROGRAM
9587890082, 9358883194
- Ph.D. (Nursing)
- Ph.D. (Anatomy)
- Ph.D (Manegement)
- Ph.D. (Bio-Chemistry)
- Ph.D. (Microbiology)
- Ph.D. (Pharmacology)
- Ph.D. (Physiology)

PIMS VENKTESHWAR INSTITUTE OF MANAGEMENT STUDIES
9587890063, 9672978017
- **BBA** (International Business)
- **MBA** (Hospital Administration & Health Care Management)

PIMS VENKATESHWAR INSTITUTE OF PHARMACY
(Approved by PCI)
9257016004, 9587890082
- D. Pharm
- B. Pharm

PIMS VENKTESHWAR COLLEGE OF PHYSIOTHERAPY
(Aproved by RPMC)
9257016002, 9587890082
- B.P.T.
- M.P.T.

PIMS VENKTESHWAR SCHOOL/COLLEGE OF NURSING
9587890082, 9257016001
- G.N.M.
- B.Sc. (Nursing)
- M.Sc

Child Health, Mental Health, Community Health, Midwifery and Obstetrical, Medical Surgical

PIMS VIFT & MASS COMMUNICATION
9588936922, 9672978017
- B.Voc/B.Des
- M.Voc/M.Des
- BA-JMC
- MA-JMC
- Diploma/Advance Diploma

PIMS INSTITUTE OF COMPUTER APPLICATIONS
9588936922, 9672978017
- B.C.A

SAI TIRUPATI UNIVERSITY, UDAIPUR

(Approved by Section 2(f) of UGC Act 1956)

Umarda Railway Station Road, Udaipur, (Raj.)

Web: www.saitirupatiuniversity.ac.in | Email: info@saitirupatiuniversity.ac.in

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 904, आर्ची आर्केड, राम-लक्ष्मण वाटिका के पास, न्यू भूपालपुरा उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत।
फोन : 0294-2429291, मोबाइल-9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।